Pravara Rural Education Society's

Arts, Commerce and Science College, Satral

Tal. Rahuri, Dist. Ahmednagar- 413711

Affiliated to Savitribai Phule Pune University, Pune.

Self-Study Report: 2024 (3rd Cycle)

Criterion-3
Research, Innovations and Extension

Key Indicator: 3.3
Research Publications and Awards

Metric: 3.3.2.1 (QnM)

Number of books and chapters in edited volumes/books published and papers published in national/ international conference proceedings per teacher during last five.

Submitted to

NATIONAL ASSESSMENT AND ACCREDITATION COUNCIL BENGALURU

3.3.2.1 Number of books and chapters in edited volumes/books published and papers published in national/ international conference proceedings per teacher during last five.

Academic Year: 2018-19

Sr. No.	Name of the teacher	Title of the book/chapters published	Title of the paper	Title of the proceedings of the conference	Name of the conference	National / International	Calendar Year of publication	ISBN number of the proceeding	Page Number
1.	B. N. Navale	*Aam Jan Ki Sashakt Abhivykti ka manch hai Loksahitya*				National	2018	978-81-8390-277-9	05
2.	B. N. Navale	*Vartman Priprekshya main Vraddhajan Vimarsh*				National	2019	978-93-88522-41-0	12
3.	E. S. Nirmal		Media and Development of India	India ; Yesterday, I Today & Tomorrow	India ; Yesterday, Today & Tomorrow	National	2019	2348-7143	22
4.	A. N. Kedare		*Vigyapan Aur Hindi*	Current Global Reviewer Jansanchar madham Aur Hindi	Current Global Reviewer Jansanchar madham Aur Hindi	National	2019	2319-8648	29
5.	Sujata Lamkhede		*Internet Per Prakashit kavya me Bhavon ki Abhivyakti*	Current Global Reviewer Jansanchar madham Aur Hindi	Current Global Reviewer Jansanchar madham Aur Hindi	National	2019	2319-8648	38

6.	A. N. Kedare		*Tulnatmak Adhyayan ki Ruprekha*	RASHTRAVANI	RASHTRAVANI	National	2018	2319-6785	44
7.	R. S. Tambe		Effect Of Earthworms (Eudrilus Eugenae) On Decomposing Vermicast And Conversion of Goat & Sheep Manure	Scholarly research Journal For Interdisciplinary studies	Scholarly research Journal For Interdisciplinary studies	National	2018	2319-4766.	47
8.	L. H. Pandure		*Subalturn etihas lekhan pravah*	International Recognition multi - disciplinary research journal	International Recognition multi - disciplinary research journal	International	2018	2249-894X	50

Arts, Commerce & Science College ACSC SATRAL Tal. Rahuri, Dist. Ahmednagar

Principal
PRINCIPAL
Art's, Commerce & Science College
Satral, Tal.Rahuri, Dist. Ahmednagar.

Submitted to

NATIONAL ASSESSMENT AND ACCREDITATION COUNCIL

BENGALURU

पुस्तक परिचय

हमारी संस्कृति के जड़ मजबूत इसीलिए है कि आज के वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रधान युग में भी हम अपनी परंपरा एवं लोक जीवन के विभिन्न पहलुओं को जीवित रखने के सतत् प्रयास में लगे रहते हैं। समय के थपेड़ों को सहते हुए हमारी लोक संस्कृति के कई तत्व अदृश्य हो गये हैं या मूल रूप से बिलकुल बदल गए हैं। हमारे गाँवों में आज भी लोक संस्कृति के अंश जिन्दा हैं। गाँवों से निर्वासित होकर शहरों में बसने वाली अधिकांश जनता भी अपनी पहचान को बनाए रखने के लिए लोक जीवन की ओर ही झुकती है। अब प्रश्न यह उठता है कि भारत जैसे विशाल देश में असंख्य लोक जीवन से जुड़ी हुई पहलू हैं। उन्हें सुरक्षित रखना हम सबका कर्तव्य है। यह कोई सरल कार्य भी नहीं है। लोक जीवन को समझने के लिए सम्बद्ध जनता के रहन-सहन, त्यौहार पर्व, कृषि या अन्य व्यवसाय, सुख-दुःख जैसी भावनाएँ आदि को अत्यंत बारीकी से देखना और अनुभव करना अनिवार्य है। लोक जीवन से जुड़ी हुई बातों को लोक साहित्य के अंतर्गत स्थान देते हुए उन्हें संकलित करना समय की माँग है। सरकार, विश्वविद्यालय, गैर सरकारी संस्थाएँ आदि को इस दिशा में कई कार्य करना है। तभी योजनाबद्ध ढंग से लोक जीवन से जुड़ी हुई बातों को दस्तावेज का रूप मिलेगा जो कि आगे की पीढ़ी के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

अभिषेक प्रकाशन
प्रकाशक एवं वितरक
सी-30, द्वितीय तल, न्यू मोती नगर, नई दिल्ली-15
फोन : 011-65640278, मोबाईल : 09811167357
ई-मेल : abhishekprakashan@gmail.com

ISBN : 978-81-8390-277-9
9 788183 902779
मूल्य : ₹ 800/-

लोकसाहित्य समाज और लोकसंस्कृति डॉ. पंडित बन्ने

लोकसाहित्य
समाज और लोकसंस्कृति

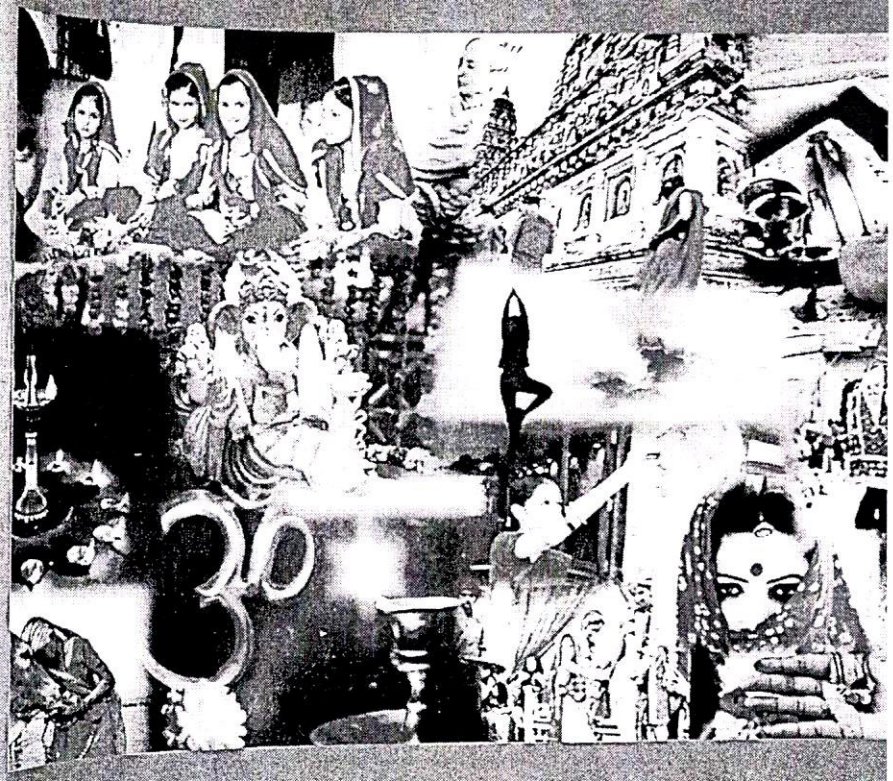

डॉ. पंडित बन्ने

Scanned with OKEN Scanner

आम जन की अभिव्यक्ति का सशक्त मंच है– लोकसाहित्य

(शुभाशंसा स्वरूप)

लोकसाहित्य की संकल्पना अत्यंत व्यापक एवं विस्तृत परिलक्षित होती है। लोकसाहित्य का संवेदनात्मक पक्ष काफी सशक्त परिलक्षित होता है। लोकसाहित्य के 'प्राण तथा आत्मा' का स्रोत ग्रामीण परिवेश ही रहा है। जिसे दूसरे शब्दों में श्रमजीवी, मजदूर एवं अथक परिश्रमियों की संस्कृति कहा जा सकता है। भारतवर्ष में लोकसाहित्य अपने बहुआयामी परिदृश्य के साथ प्रस्तुत होता है। जिसे किसी निश्चित सीमा में बांधना मुश्किल है। विभिन्न प्रदेशों में लोकसाहित्य के असीम पहलू उजागर होते हैं। देश की अन्यान्य प्रादेशिक भाषाओं का भी अपना लोकसाहित्य कम-अधिक मात्रा में क्यों न हो, अवश्य प्रकाश में आया है। भले ही आरंभिक चरण में लोकसाहित्य मुद्रित रूप में अभिव्यक्त नहीं हो पाया हों, लेकिन वह फिल्मों तथा नाट्य मंडलियों के अवदान से व्यापक परिक्षेत्र में अपनी दस्तक दे चुका है। कहना न होगा कि लोकसाहित्य का विभिन्न भाषा-भाषी परिदृश्य निश्चित ही उल्लेखनीय रहा है। मराठी, हिंदी, कन्नड, तेलुगु, राजस्थानी, भोजपुरी, अवधि, बंगाली, गुजराती, हरियाणवी तथा मलयालम जैसी प्रादेशिक भाषाओं में लोकसाहित्य को व्यापक मंच मिला हुआ दिखाई देता है। लोकसाहित्य के प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप में प्राप्त होने के कारण ही वह भारतीय संस्कृति की नींव के रूप में अपनी भूमिका अदा कर रहा है। यदि हम 'लोकसाहित्य' को भारतीय संस्कृति की रीढ़ कहेंगे तब भी अतिशयोक्ति नहीं होगी। वैश्वीकरण की आबोहवा

Scanned with OKEN Scanner

के बावजूद भी भारतवर्ष का लोकसाहित्य उच्चतम कोटि का निर्वाह करता हुआ दिखाई देता है। कहना होगा कि वर्तमान विमर्शोन्मुख परिदृश्य की जड़ें तथा प्रतिबिंब लोकसाहित्य में मुखरित होता है।

'लोकसाहित्य' आम जन की अभिव्यक्ति का सशक्त एवं परिवर्तनोन्मुख मंच साबित हो रहा है। 'लोकसाहित्य' का महत्त्वपूर्ण पक्ष है कि लोकसाहित्य के कारण समाज के उस वर्ग को व्यापक अभिव्यक्ति मिली है जो सदियों से लेखन, वाचन तथा शिक्षा से वंचित दिखाई देता है। महाराष्ट्र के संतों की देन तथा ज्ञान साधना की जड़ें लोकसाहित्य में ही समाहित दृष्टिगोचर होती है। कबीर, नामदेव के साथ महाराष्ट्र के अधिकतर संतों ने अपने लोकसाहित्यिक मौखिक रूप के माध्यम से अपनी जिंदगी के स्वर्णीम क्षणों से वंचित जन को अंधविश्वास की खाई से बाहर निकालने के लिए हरदम प्रयास किया है। कहना उचित होगा कि लोकसाहित्य के माध्यम से ही आम जन के जीवन को व्यापक अभिव्यक्ति मिली है। ध्यातव्य बात यह कि हमारी प्रथाओं एवं परंपराओं के कारण भी लोकसाहित्य की रक्षा पर्याप्त मात्रा में हुई है। वस्तुतः लोकसाहित्य में विभिन्न निम्न स्तर के जाति धर्मों के लोगों के दैनिक जीवन की घटनाओं का संबंध रहता है। भारतवर्ष की नारी को लोकसाहित्य के कारण ही अनन्य साधारण महत्त्व मिला हुआ दिखाई देता है। कृषि संस्कृति तथा लोकसंस्कृति को व्यापक धरातल पर प्रस्तुत करने में लोकसाहित्य का योगदान महत्त्वपूर्ण परिलक्षित होता है।

लोकसाहित्य का शिक्षाविषयक पक्ष भी काफी सशक्त परिलक्षित होता है। लोकशिक्षा, नीतिशिक्षा, पारंपरिक लोकाविष्कार आदि को लोकसाहित्य के कारण पर्याप्त मात्रा में बढ़ावा मिला है। पारंपरिक लोकाविष्कार से लोकशिक्षा के साथ-साथ नीति शिक्षा का कार्य भी होता है। समाज में किस प्रकार का आचरण हो तथा उससे संबंधित संकेत और नियम आदमी को जानकारी का पता भी उससे होता है। लोकसाहित्य ने ही आरंभिक काल से आज तक स्त्री को महत्त्व दिया है। शिक्षा के स्तर पर आज भी लोकसाहित्य को पर्याप्त मान्यता नहीं मिल रही है।

प्रसन्नता की बात है कि प्रस्तुत कृति के लेखक डॉ. पंडित बन्ने ने अपनी आवश्यकता को केंद्र में न रखकर अपनी विषयगत रुचि, साहित्यिक प्रतिबद्धता एवं साहित्यिक माँग को केंद्र में रखकर इस कृति की रचना की है, जो हिंदी साहित्य ही नहीं, अपितु शोध अध्येताओं की दृष्टि से उपलब्धि सिद्ध होगी। डॉ. बन्ने का व्यक्तित्व उन नवलेखकों में महत्त्वपूर्ण माना जा सकता है जिन्होंने अहिंदी भाषी ग्रामीण परिवेश में अपना अध्यापकीय दायित्व निभाते हुए अपनी शोधपरक एवं अनुसंधाता दृष्टि से हिंदी साहित्य को लगभग दर्जन से ज्यादा ग्रंथों तथा दो सौ से अधिक राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय शोधालेखों के प्रकाशन से समृद्ध किया है। आज भी लोकसाहित्य के अध्येताओं, स्नातक तथा स्नातकोत्तर अध्येता तथा छात्रों को लोकसाहित्य विषयक सामग्री तथा संकल्पना से संबंधित जिज्ञासाओं की परितुष्टि हेतु गुगलदेव तथा ग्रंथालयों की खोजबीन करनी पड़ती है। छात्रों की दृष्टि से निश्चित ही यह पुस्तक उपयोगी सिद्ध होगी। वस्तुतः यह कृति डॉ. पंडित बन्ने के लोकसाहित्य के प्रति विशिष्ट रूझान तथा उनकी मौलिक एवं साहित्यिक शोधपरक दृष्टि का परिचायक है।

लोकसाहित्य से संबंधित अन्यान्य पहलुओं का उद्घाटन करना लेखक का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य दिखाई देता है। अपने गहन और व्यापक अध्ययन तथा श्रमपूर्वक किए प्रयासों से इस कृति को लेखक ने पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किया है। यह कृति 'लोकसाहित्य : समाज और लोकसंस्कृति' दो विभागों में विभाजित हैं। पहले विभाग में लोकसाहित्य के सैद्धांतिक पक्ष 'लोकसाहित्य : अर्थ, परिभाषा, स्वरूप तथा व्याप्ति' पर विस्तार से विवेचन प्रस्तुत करते हुए तथ्यात्मक मान्यताएँ दी है। दूसरे विभाग में लोकसाहित्य के महत्त्वपूर्ण पक्ष 'लोकजीवन और लोकसंस्कृति' पर प्रकाश डाला है। इस विभाग में लोकसाहित्य, लोकजीवन तथा लोक-संस्कृति विषयक पहलुओं को व्यापक धरातल पर अभिव्यक्ति देते हुए लोकसाहित्य के बहुआयामी परिदृश्य को केंद्र में रखकर विवेचन-विश्लेषण किया है। इसमें लेखक ने निष्कर्षों के साथ-साथ उपलब्धियों की ओर भी सूक्ष्म दृष्टि केंद्रित की है, यह पक्ष लेखक की विषयगत संवेदना तथा प्रतिबद्धता का परिचायक है। गौरतलब है कि लेखक ने इस कृति में सूफी कवि जायसी तथा कृष्ण भक्ति शाखा के प्रमुख कवि सूरदास की

Scanned with OKEN Scanner

लोकविषयक संवेदना को भी रेखांकित किया है। ग्रंथ का सैद्धांतिक और व्यावहारिक पक्ष एक दूसरे के साथ समन्वय स्थापित करता है। ग्रंथ में प्रस्तुत मान्यताएँ तथा तथ्यों से लेखक की सूक्ष्म धरातलीय दृष्टि मुखरित होती है।

उम्मीद है, संदर्भ ग्रंथ के रूप में प्रस्तुत कृति का हिंदी जगत् में लोकसाहित्य के विभिन्न भाषा-भाषी अध्येताओं, शोधकर्ताओं तथा अध्यापकों से स्वागत होगा। यह ग्रंथ उनके लिए महत्त्वपूर्ण उपलब्धि सिद्ध होगा। निश्चित ही लोकसाहित्य एवं लोकसंस्कृति विषयक अध्ययन की कड़ी को गतिशील तथा समृद्ध बनाने में डॉ. पंडित बन्ने के अथक परिश्रम एवं प्रयासों की मैं सहर्ष प्रशंसा करता हूँ। उन्हें अनेकानेक शुभेच्छाएँ देते हुए उनसे मौलिक एवं आलोचनात्मक साहित्य सृजन की कामना करता हूँ।

–डॉ. भाऊसाहेब नवले
कोल्हार-अहमदनगर (महाराष्ट्र)

भूमिका

लोकसाहित्य लोकजीवन का जीता-जागता प्रतिबिंब है। लोकजीवन की स्वच्छंद उमंगपूर्व, उल्लास युक्त अनुभूतियों की सरस, मधुर एवं स्वाभाविक झाँकिया इसमें प्रस्तुत होती है। लोकसाहित्य का क्षेत्र बहुत विस्तीर्ण एवं व्यापक रहा है। लोकसाहित्य का सामाजिक, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक, भौगोलिक, राष्ट्रीय, नैतिक, भाषावैज्ञानिक, आर्थिक, धार्मिक आदि अनेक दृष्टियों से महत्व रहा है। सूरज, चाँद, चूल्हा, मिट्टी, नदी, तालाब, पेड़, पर्वत, देवी-देवता की पूजा विधि, मनुष्य जन्म से लेकर मृत्यु तक के अवसरों पर गीत गाएँ जाते हैं। परंपराएँ, व्रत, त्यौहार, यज्ञ, अनुष्ठान, सुख-दु:ख विविध संस्कारों के समय- सामूहिक रूप में स्त्रियाँ लोकगीतों का गायन करती है।

सहज स्वाभाविक अज्ञान रचनाकार, लोकसंस्कृति का स्वाभाविक यथार्थ चित्रण, लोकमंगल की भावना, मौखिक परंपरा आदि अनेक विशेषताओं के कारण लोकसाहित्य के अध्ययन के प्रति आकर्षण बना हुआ है। भारतीय संस्कृति एवं लोकसाहित्य के बीच गहरा संबंध है। लोककथाएँ, लोकगीत एवं लोकनाट्य में अभिव्यक्त संदेश हमारे आज के जीवन पर भी पूरी तरह से लागू होते हैं। लोकसाहित्य परंपरा-पोषक और संस्कृति-संवाहक होता है। लोक-साहित्य हमारी संस्कृति के मूल्यवान दस्तावेज है। आज हिंदी साहित्य में जितने भी विमर्श हो लेकिन उनकी जड़े लोकसाहित्य में दिखाई देती है। आदिवासी, स्त्री, दलित, बाल विमर्श के संबंध में लोकसाहित्य बहुत पहले ही जागरुक रहा है। सामान्य जन के प्रत्येक हाव-भाव, उसका गाना, रोना, हँसना, खेलना-कूदना सभी लोकसाहित्य की परिधि में आते हैं। भारतीय संस्कृति में संस्कारों का बाहुल्य है, अत: जन्म से लेकर मृत्यु तक के संस्कारों के अवसर पर गीत गाने की प्रथा प्रचलित है। ये सब गीत लोकसाहित्य के अंतर्गत आते हैं।

Scanned with OKEN Scanner

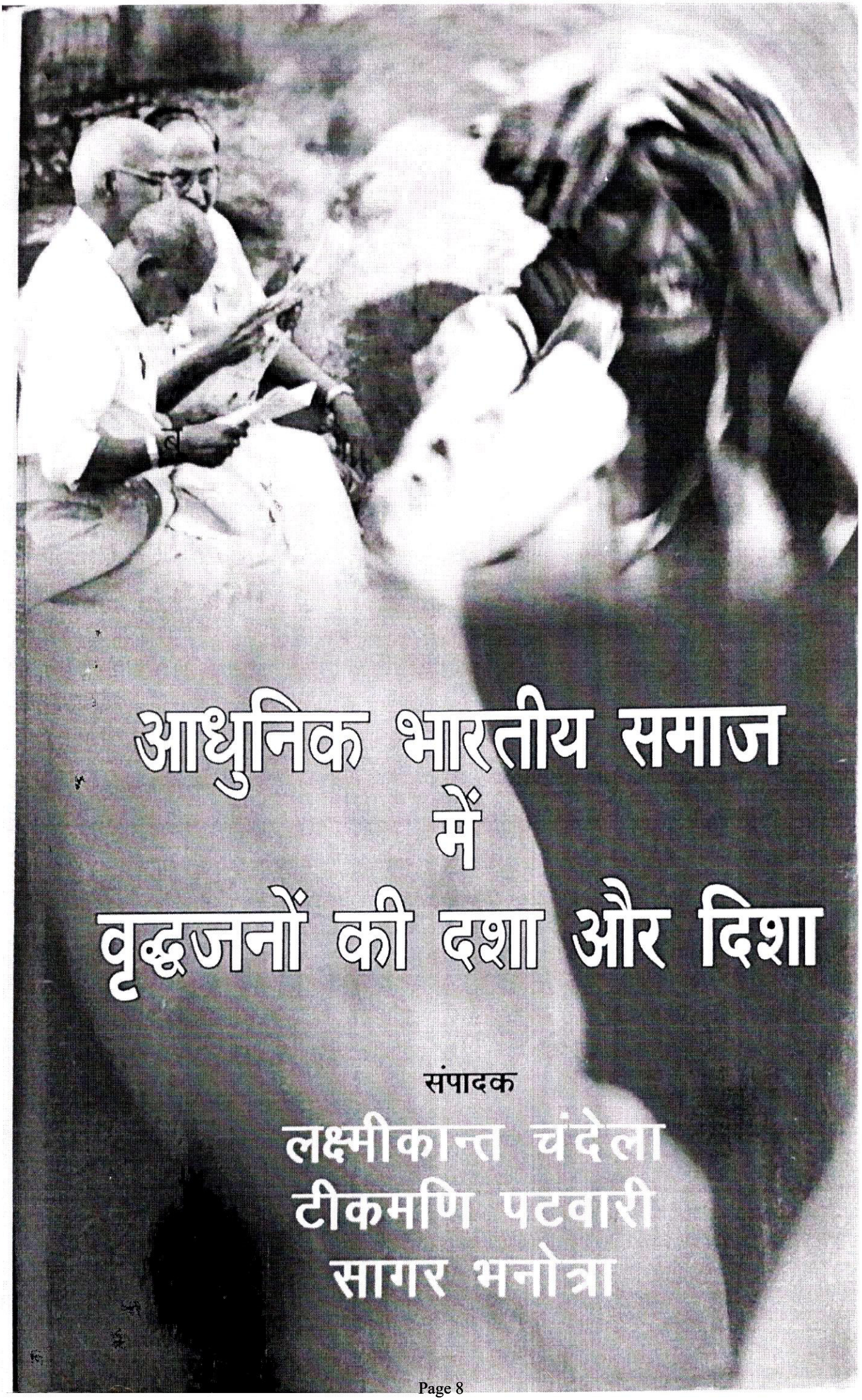

आधुनिक भारतीय समाज में वृद्धजनों की दशा और दिशा

संपादक

लक्ष्मीकान्त चंदेला

टीकमणि पटवारी

सागर भनोत्रा

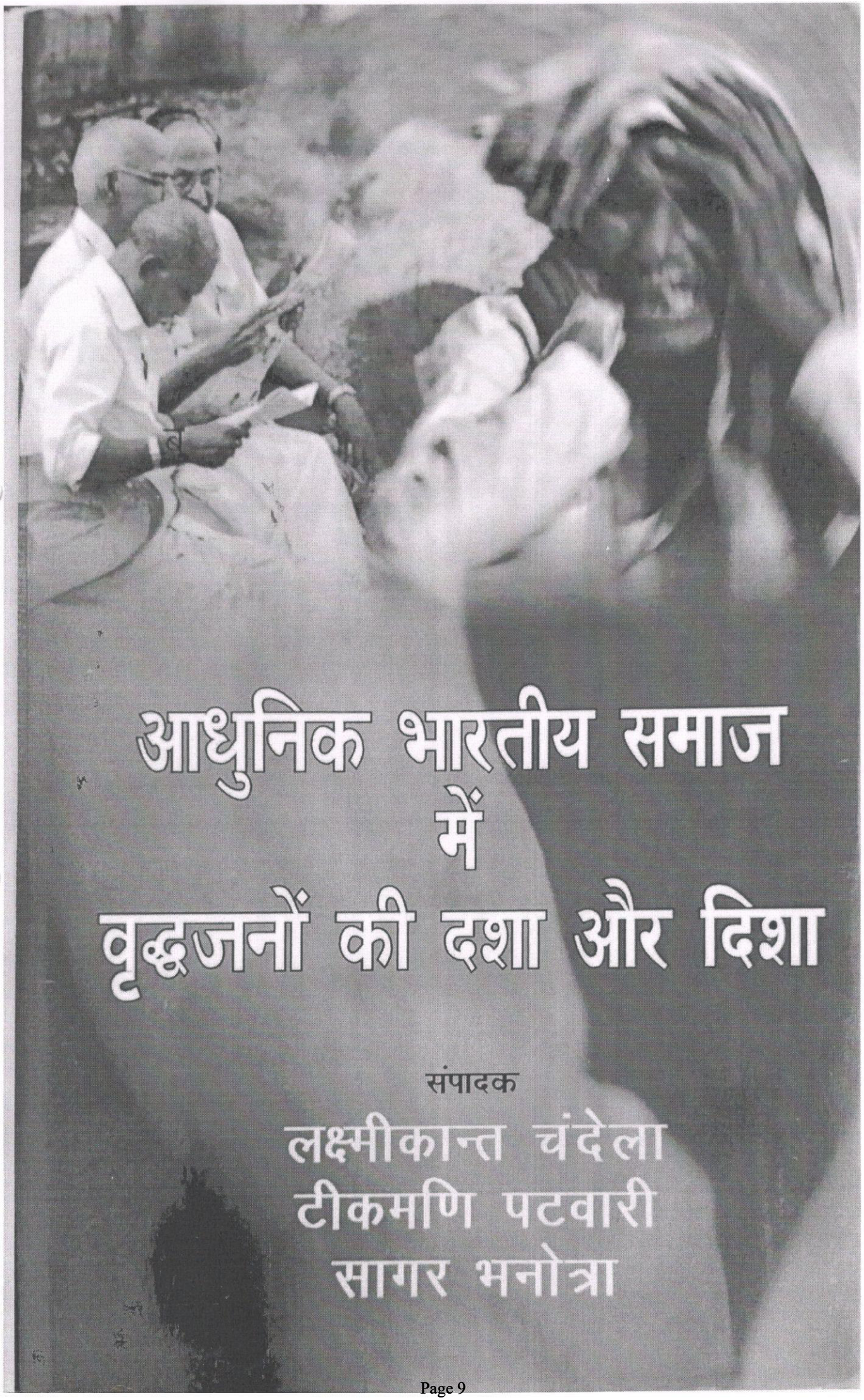
आधुनिक भारतीय समाज
में
वृद्धजनों की दशा और दिशा
संपादक
लक्ष्मीकान्त चंदेला
टीकमणि पटवारी
सागर भनोत्रा

जे.टी.एस. पब्लिकेशन्स, दिल्ली

वैधानिक चेतावनी

पुस्तक के किसी भी अंश के प्रकाशन- फोटोकॉपी, इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों में उपयोग के लिए लेखक/ संपादक/ प्रकाशक की लिखित अनुमति आवश्यक है। पुस्तक में प्रकाशित शोध-पत्रों में निहित विचार तथा संदर्भों का संपूर्ण दायित्व स्वयं लेखकों का है, संपादक/ प्रकाशक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है।

आधुनिक भारतीय समाज में वृद्धजनों की दशा और दिशा

संपादक

लक्ष्मीकान्त चंदेला
टीकमणि पटवारी
सागर भनोत्रा

© सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण : २०१९

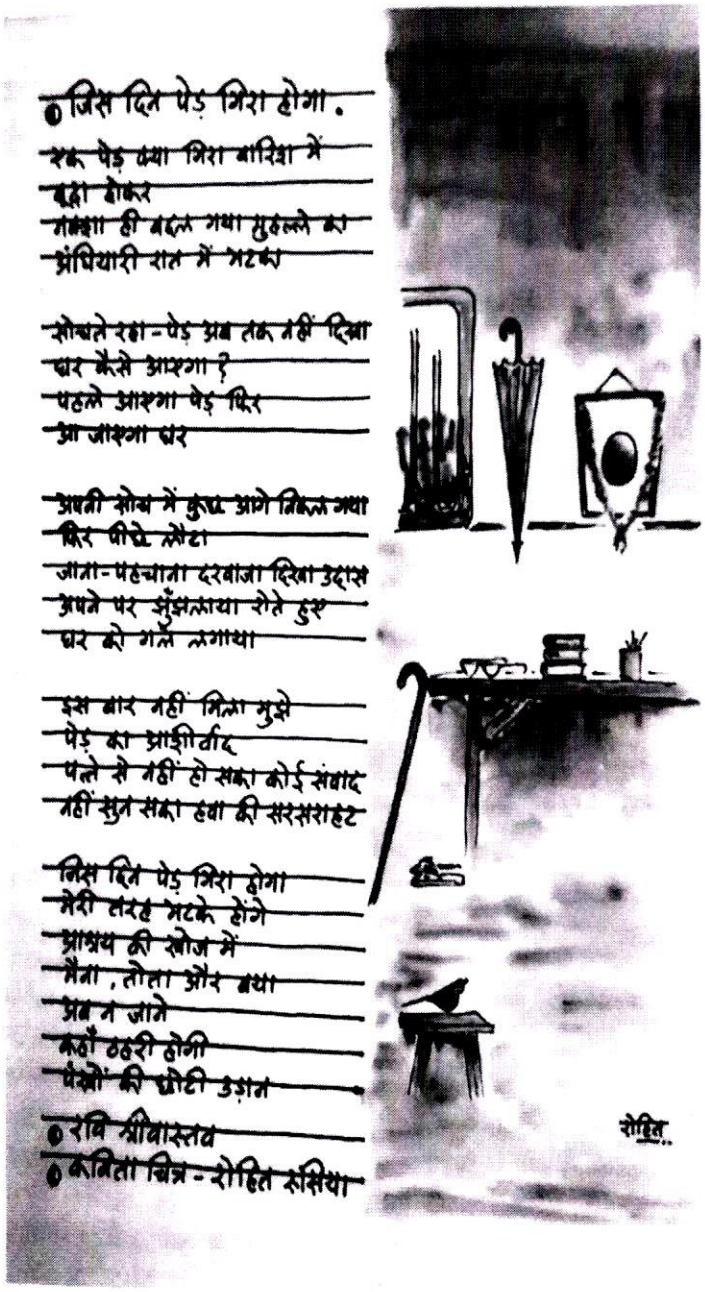

ISBN 978-93-88522-41-0

प्रकाशक

जे०टी०एस० पब्लिकेशन्स

वी-५०८, गली नं०१७, विजय पार्क, दिल्ली-११००५३

दूरभाष : ०८५२७ ४६०२५२, ०११-२२९११२२३

E-Mail : jtspublications@gmail.com

मूल्य : ५००.०० रूपये

आवरण : प्रतिभा शर्मा, दिल्ली

मुद्रक : तरूण ऑफसेट प्रिंटर्स, दिल्ली

अंत में यही कि बुढ़ापा अगर दे भी तो देने से पहले ही उठा ले। लोक में इसीलिए यह कहावत बहुमान्य रूप से प्रचलित हुई कि 'भगवान किसी को बुढ़ापा देने से पहले ही उठा ले।

आज के समय में 'अन्यान्य' विमर्श पर्याप्त रूप से हो रहे हैं परन्तु मुखर रूप से वृद्धजनों पर विमर्श कम ही हुए हैं। यह पुस्तक एवं इसमें संग्रहित अधिकारी विद्वानों के लेख वृद्ध–जीवन में आस बंधाने का प्रणम्य प्रयास है।

यदि यह पुस्तक बुजुर्गो–वृद्धजनों को आंशिक ही सही अनुकूल जीवन दिला पाने में समर्थ हुई तथा पाठकों–शोधार्थियों को अपने कर्तव्य सूत्र–संकेत मिल सके तो संपादकीय प्रयास सार्थक होगा।

निश्चित ही संपादित पुस्तक में त्रुटि/कमी होना हमारी–संपादकीय सीमा है किन्तु चिंतकों–विद्वानों ने अपनी प्रखर चेतनापूरित आलेख उपलब्ध कराये, उन्हें हजार माथे से नमन करते हैं।

–लक्ष्मीकान्त चंदेला

महाशिवरात्रि
05/03/2019

टीकमणि पटवारी
सागर भानोत्रा

अनुक्रमणिका

कवितांचित्र : रोहित रूसिया ५
संपादकीय... : लक्ष्मीकान्त चंदेला ७

खण्ड (अ)

१. आधुनिक संदर्भ में वृद्धों की सामाजिक समस्याएँ ११
दिनेश भट्ट १६
२. वृद्धजन और मनोविज्ञान
गोवर्धन यादव २२
३. साहित्य और वृद्ध विमर्श
बीर पाल सिंह यादव ३३
४. हिंदी कहानियों में वृद्ध जीवन
प्रीति सागर ४२
५. साहित्य में वृद्धजन : दशा एवं दिशा
डॉ. शोभा सिन्हा
६. वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण तथा कल्याण अधिनियम २००७ : ४५
एक विश्लेषणात्मक अध्ययन
डॉ. राजेंद्र कुमार मिश्रा
७. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में 'वृद्धजन' विमर्श ५६
डॉ. भाऊसाहेब नवनाथ नवले
८. वृद्धजन जीवन ६५
डॉ. रमेश कुमार गोहे
९. वृद्धावस्था एवं मनोवैज्ञानिक समस्याएँ ७४
डॉ. कामना वर्मा
१०. हिन्दी कथा साहित्य में वृद्धजन ८६
डॉ. चमन लाल शर्मा
११. वृद्धजन और हमारा समाज ९२
डॉ. रामनाथ झारिया
१२. समय सरगम का जीवन यथार्थ १००
डॉ. निर्मल चक्रधर
१३. जाओ, बुड्ढा–डुकरा हो जाओ ... १०५
अवधेश तिवारी
१४. वृद्धाश्रम वरदान या अभिशाप १०८
श्रीमती हर्षलता उइके

7

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में 'वृद्धजन' विमर्श

डॉ. भाऊसाहेब नवनाथ नवले
उपप्राचार्य एवं सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग
प्रवरा ग्रामीण शिक्षण संस्था का. कला, विज्ञान एवं
वाणिज्य महाविद्यालय, कोल्हार
तहसील–राहाता, जिला–अहमदनगर पिन–413710,

सारांश :
वर्तमान में वृद्धजन विमर्श चिंता की अपेक्षा चिंतन के लिए बाध्य करता है। गौरतलब है कि प्रेमचंद से लेकर आज तक के हिंदी साहित्य में इस विमर्श की दृष्टि से रचनाकारों की प्रतिबद्धता दृष्टिगत होती है। हिंदी साहित्य की कहानी, उपन्यास तथा काव्य में प्रस्तुत विमर्श पर काफी बहस परिलक्षित होती है। फिर भी आज के परिवेश के अनुरूप यह विमर्श व्यापक धरातल की माँग करते हुए उसके चरितार्थ की अपेक्षा रखता है। विवेचित कवि आज के प्रातिनिधिक कवि के रूप में लिए गए है। बुजुर्गों तथा वृद्धजनों का अपना स्वतंत्र अस्तित्व है जो नई तथा युवा पीढ़ी के लिए मार्गदर्शक एवं पथदर्शक रहा है। भारतीय युवाओं को पाश्चात्य अंधानुकरण से प्रभावित होने की अपेक्षा भारतीय संस्कृतिगत विरासत से भली–भाँति परिचित होना आवश्यक प्रतीत होता है।

विषय संकेत : वृद्धजन, बुजुर्ग, विमर्श, अंधानुकरण, प्रेरणास्रोत, दबाव, आधुनिकता, पीढ़ी, अपनापन, कैरियर

शोध विस्तार :
21 वीं सदी विमर्शकेंद्री सदी के रूप में सर्वपरिचित है। इसी सदी में स्त्री–विमर्श, बाल विमर्श, किसान विमर्श, दलित विमर्श, किन्नर विमर्श, आदिवासी विमर्श तथा युवा विमर्श आदि को व्यापक धरातल पर अभिव्यक्ति मिली है। कहना सही होगा कि इसी सदी में 'वृद्धजन' विमर्श ने भी अपनी दस्तक दी हुई परिलक्षित होती है। वास्तव में वद्धजन विमर्श व्यापक पृष्ठभूमि में अध्ययन एवं अनुसंधान की मांग करता है। आधुनिकता के चलते वद्धजन चिंता की अपेक्षा चिंतनीय

परिलक्षित होता है। आधुनिकता एवं भूमंडलीकरण के दौर में रिश्ते–नाते, छोटे–बड़े, युवा–बुजुर्ग आपसी संघर्ष आदि ने आम आदमी को सोचने के लिए मजबूर किया है। दिवस मनाने के सिलसिले में जीवित होते हुए भी बुजुर्गों को दिवस का शिकार बनाने की साजिश रची जा रही है। निश्चित ही इस साजिश के जड़ों तक पहुँचना समय एवं समाज की आवश्यकता बनी हुई है। प्रस्तुत शोधालेख में हमने वृद्धजन विमर्श से संबंधित विभिन्न पहलुओं को केंद्र में रखा है।

वृद्धजनों का वर्तमान परिदृश्य :
परिवार में आज वृद्धावस्था के शिकार जन को लाचारी एवं मजबूरी का जीवन जीना पड़ रहा है। सभी धरातलों पर बुजुर्गों एवं वृद्धजनों की काफी उपेक्षा होती नजर आती है। समाज के वद्धजनों के साथ अच्छा व्यवहार नहीं हो रहा है। गौरतलब है कि जहाँ अपने कहे जानेवाले परिवार के लोग बेटे–बेटियाँ भी अपने माता–पिता को, सास–ससूर को वृद्धाश्रमों की यात्रा के लिए मजबूर करते परिलक्षित होते हैं। कहना न होगा कि आधुनिकता तथा उत्तर आधुनिक सोच एवं मानसिकता ने पारिवारिक मूल्यों के विघटन को काफी हद तक बढ़ावा दिया है। परिवार से होते हुए व्यापक समाज तक वृद्धजनों को तिरस्कार एवं घृणा की दृष्टि से देखा जाता है। परिवार में जहाँ एक ओर बुजुर्गों को कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है, वहाँ व्यापक सामाजिक परिप्रेक्ष्य अस्पताल, बस अड्डे, बस, बिलों के भुगतान के दौरान तथा बाजार में भी उन्हें दुर्व्यवहार का शिकार होना पड़ रहा है।

बुजुर्ग तथा वृद्ध जन इन समस्याओं एवं परेशानियों का शिकार क्यों है ? इस बात पर विचार करना समय की आवश्यकता है। हम इस बात से भली भाँति परिचित है कि एक समय था जब परिवार में बुजुर्गों तथा बड़ों का काफी हद तक आदर एवं सम्मान किया जाता था। घर–परिवार के हर निर्णायक समय में बुजुर्गो एवं वृद्धों से सलाह मशविरा किया जाता था। उनके बगैर कोई भी महत्त्वपूर्ण निर्णय नहीं होते थे। कहना न होगा कि वृद्धजनों को सभी जगह पर अन्याय, उपेक्षा, शोषण, शर्मनाक व्यवहार तथा आर्थिक अभावों का पर्याप्त मात्रा में शिकार होना पड़ रहा है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में बुजुर्गों की होती उपेक्षा के बारे में गांधीवादी विचारक तथा चिंतक डॉ. रजी अहमद "पुरानी परंपराओं के पतन को जिम्मेदार मानते हैं। ... बेटी एवं बहू में फर्क करने की पारिवारिक व्यवस्था भी इसके लिए मुख्य रूप से जिम्मेदार है।"[1] द्रष्टव्य कथन से स्पष्ट होता है कि पुरानी परंपराओं के पतन के कारण तथा बेटा–बेटी में भेदभाव करने की बढ़ती प्रवृत्ति के कारण

बुजुर्गों को इस प्रकार की संकुचित मनोवृत्ति का शिकार होना पड़ रहा है। विचारणीय है कि हम बार–बार दुहाई देते हैं कि पुरानी परंपराओं के चलते राष्ट्र तथा समाज का विकास नहीं होगा। लेकिन यहाँ प्रस्तुत बात गंभीरता से सोचने के लिए मजबूर करती है। डॉ. ऋषभदेव शर्मा बुढ़ापे को एक नई दृष्टि से देखने की आवश्यकता पर बल देते हुए कहते हैं" एक ऐसी दृष्टि से जिसमें संवेदना हो और बूढ़ों के लिए आदर व सम्मान हो। जीवन देने की आकांक्षा हो।"[2] स्पष्ट है कि वृद्धजन तथा बुजुर्गों के प्रति नए सिरे से सोचने की आवश्यकता प्रतीत होती है। आम जनों में उनके प्रति सम्मान एवं आदर के साथ संवेदना का स्वर उभरकर आना समय एवं समाज की दृष्टि से आवश्यक है। हमारा दायित्व बनता है कि वृद्धजनों को नया जीवन देने का सामर्थ्य हम सभी में हों। हमारे दिमाग में बुढापा शब्द के कहने पर ही तुरंत बुढ़ापे के शिकार व्यक्तित्व की छवि उपस्थित होती है। सामान्य रूप से हम यह सोचने लगते हैं कि बुढ़ापा अर्थात जो मात्र निकम्मा है, जो किसी काम करने लायक न हो, जो मात्र परिवार के लिए बोझ है, आर्थिक अभावों में भागीदार है, जिसे परिवार से कुछ लेना–देना नहीं है, ऐसे तरह–तरह के विचार घर करते हैं। स्वाभाविक रूप से बुजुर्गों के प्रति हमारे मन में आस्था एवं आत्मीयता की भावना पनपना मुश्किल होता है। वास्तव में बुढ़ापा नई पीढ़ी के लिए प्रेरणास्रोत एवं दिशा–निर्देशक होता है।

साहित्य में वृद्धजन विचार :

हिंदी तथा अन्यान्य प्रादेशिक भाषाओं के साहित्य में वृद्धजन को केंद्र में रखकर विचार अवश्य हुआ है। लेकिन साहित्य में चित्रित बुढ़े व्यक्तित्व को न दिशादर्शक के रूप में न आदर्श के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, बल्कि अधिकतर साहित्य में बुजुर्गों का चित्रण मात्र युवा और बुजुर्ग के आपसी संघर्ष के रूप अभिव्यक्त होता नजर आता है। सही रूप में बुढ़ापे में काफी क्षमता होती है। जिसका जायजा हम महात्मा गांधी जी के नेतृत्व से ले सकते हैं। यह वह व्यक्तित्व था जिसने युवाओं को साथ लेकर अपनी असीम शक्ति का परिचय देते हुए अँग्रेजों को भारत छोड़ने के लिए मजबूर किया था। यदि हम कुछ नया करना चाहते हैं तो उसके सूत्र हमें बुजुर्गों से ही प्राप्त हो सकते हैं। किसी भी रचनात्मक कार्य में बुजुर्ग हमारे लिए पदथर्शक तथा दिशादर्शक के रूप में भूमिका अदा करते हैं। "बूढ़ों या पुराने के अनुभवों से बहुत कुछ श्रेष्ठ, सकारात्मक मूल्यों को आत्मसात करके प्रकट होने व रचनाशीलता ही भविष्य की दीपशिखा प्रज्ज्वलित करने में सक्षम होती है।"[3] द्रष्टव्य कथन से विदित होता है कि नव सृजन का

मुख्य आधार बूढ़े तथा पुराने मूल्य ही होते हैं। बुजुर्ग दीपशिखा के रूप में दायित्व वहन करते हुए दिखाई देते हैं। वृद्धावस्था में बुजुर्ग अक्सर स्वयं पर कोसते नजर आते हैं। अपनी पूरी जिंदगी वे अपने घर, परिवार, बच्चे, नौकरी तथा समाज के लिए काटते अवश्य है, लेकिन जैसे ही वे अपनी सेवा से निवृत्त होते हैं और आय के स्रोत कम होते हैं, तो उनके प्रति परिवारवालों का नजरिया भी बदलता हुआ दिखाई देता हैं। हिंदी साहित्य में वृद्धावस्था केंद्री पहल कम मात्रा में क्यों न हो, दृष्टिगोचर होती है। हिंदी साहित्य की उपन्यास, कहानी तथा कविताओं में बुजुर्गों का चित्रण मिलता है। प्रेमचंद की 'बूढी काकी', उषा प्रियम्वदा की 'वापसी', जैनेंद्रकुमार की 'सुख', मनिषा कुलश्रेष्ठ की ' प्रेतकामना', भीष्म साहनी की 'चीफ की दावत' सुषम बेदी की 'गुनाहगार', अमरीक सिंह दीपक की 'तीर्थाटन', कृष्णा अग्निहोत्री की 'यह क्या जगह है दोस्तों' तथा ममता कालिया के 'दौड़', अनामिका के 'तिनका तिनके पास' आदि उपन्यासों के साथ–साथ काव्य साहित्य में भी पर्याप्त मात्रा में वृद्धावस्था की विवश जिंदगी के जीते बूढ़ों का विवेचन मिलता है। डॉ. रमेश सोनी की 'गाँव पर माँ, निशा माथुर की 'एक दुआ हमारे बुजुर्ग', संजय वर्मा की 'आधुनिक', डॉ. कुमारेंद्र सिंह सेंगर की 'वृद्धावस्था', विलियम बटलर येटस् की ' वृद्धावस्था में झगड़े', डॉ. अवंतिका शेखावत की 'पागल बुढ़िया', प्रभुदयाल श्रीवास्तव की 'वृद्धाश्रम', सुमित प्रताप सिंह की 'घर में बुजुर्ग होने का अर्थ' आदि रचनाओं में भी वृद्धजन विमर्श की पर्याप्त हिमायत मिलती है।

असीम प्रेरणा का स्रोत है बुजुर्ग –

निशा माथुर अपनी रचना 'एक दुआ हमारे बुजुर्ग' में बुजुर्गों के अतुलनीय योगदान पर प्रकाश डालती है। बुजुर्ग ही वह सहारा होते हैं जो अपनी दुआओं से नई पीढ़ी के लिए संबल बन जाते हैं। जब भी आज की पीढ़ी भ्रम का शिकार तथा दिशाहीन हो जाती है उस अवसर पर बुजुर्ग ही पथदर्शक के रूप में दायित्व वहन करते दृष्टिगोचर होते हैं।'हमारा जूनून, हमारी ख्वाहिश, ताकत बन जाते हैं, हमारे बुजुर्ग। ... मरते हुए के लिए उस पल आशीर्वाद बन जाते हैं, हमारे बुजुर्ग। दिये की तरह टिमटिमाते जलते हैं।"[4] द्रष्टव्य उद्धरण इस बात की पुष्टि करता है कि जिन बुजुर्गों को आज की पीढ़ी परिवार के लिए मात्र बोझ समझाती है, उन्हें बुजुर्गों के असीम योगदान पर विचार करना होगा। नई पीढ़ी के लिए बुजुर्ग सबसे बड़ी ताकत के रूप में होते हैं। किसी भी प्रकार के संकट के समय बुजुर्ग ही अपने अनुभवों के आधार पर नई पीढ़ी के लिए आधार बन जाते हैं। हम कह सकते हैं कि बुजुर्ग

युवाओं के लिए दीये की तरह स्वयं जलकर दूसरों को सदा के लिए प्रकाश दे देते हैं। इसलिए स्वयं जलकर दूसरों के लिए प्रकाशदायी बननेवाले बुजुर्गों के प्रति भी अपना कुछ दायित्व बन जाता है, इस बात पर विचार करने के लिए कवयित्री बाध्य करती है। 'घर में बुजुर्ग होने का अर्थ' कविता में सुमित प्रताप सिंह ने घर में बुजुर्गों का साया किसी वटवृक्ष से कम नहीं है। घर में बुजुर्गों का होना व्यापक अर्थों में लिया जा सकता है। घर तथा परिवार के लिए बुजुर्ग पाठशाला की भाँति होते है। कवि का कहना है "घर में बुजुर्ग का होने का अर्थ है, जीवन की एक विशेष पाठशाला का होना,.. हमारे परिवार के चारों ओर, एक मजबूत चारदीवारी का होना"[5] स्पष्ट है कि परिवार की दृष्टि से बुजुर्गों का अनन्यसाधारण महत्त्व होता है। वे किसी पाठशाला से कम नहीं होते है। क्योंकि परिवार का हर कोई उनके मार्गदर्शन का जब चाहे लाभ उठा सकता है। परिवार की कड़ी सुरक्षा भी उन्हीं के बूते पर होती है। इसलिए परिवार में बुजुर्गों का होना जरूरी है। जो अपने व्यापक तजुर्बे। से नई पीढ़ी को हर समय लाभान्वित होने का अवसर प्रदान करते है।

आधुनिकता के प्रभाव में दबता बुजुर्ग –

संजय वर्मा 'दृष्टि' अपनी कविता 'आधुनिक' में बुजुर्गों का महत्त्व तथा आधुनिकता के कारण आए बदलाव एवं उसमें दबते बुजुर्गों का लेखा–जोखा प्रस्तुत करते हैं। भागदौड़ भरी जिंदगी और रोजी–रोटी की तलाश में व्यक्ति अपने परिवार की आधारशीला को ही नजरअंदाज करता दिखाई देता है। संजय वर्मा अपनी रचना में कहते हैं– "बूढ़े पग नहीं दबाए जाते अब क्यों, क्या जिंदगी आधुनिक हो गई बूढ़ों को संग ले जाने में शर्म हुई पागल अब क्यों ?...भागदौड़ भरी दुनिया में उनके पास बैठने का समय कहाँ ?"[6] आधुनिकता की चक्काचौंध ने आदमी की आदमियत मानों लापता हुई है। आधुनिकता के छत के नीचे दबी युवा पीढ़ी की जिंदगी अपने ही बुजुर्गों का खयाल रखने में असमर्थ दिखाई देती है। कवि कहता है कभी एक जमाना था, जब घर के बेटे घर के बुजुर्गों के पैर दबाते थे, यहाँ तक कि किसी अवसर पर बूढ़ों को भी अपने साथ ले जाते थे लेकिन आज स्थितियाँ बिल्कुल इसके उल्टी दिखाई देती है। बेटों को अपने माता–पिता के पैर दबाने के लिए समय नहीं है, न ही वह अपने साथ उन्हें ले जाने में गौरव महसूस करता है और न ही वह अपने माता–पिताओं के पास बैठने के लिए समय दे पाता है। आर्थिक अभावों के कारण हों, या आधुनिकता की हवा में बह जाने के कारण क्यों न हो आज की पीढ़ी अपने पारिवारिक दायित्वों से खुले आम विमुख होती जा रही है।

स्वाभाविक रूप से बुजुर्ग आधुनिकता की चक्की के पाटों में पिसता जा रहा है। इसलिए कवि बजुर्गों का आदर तथा सम्मान करने की पुरजोर अपील करता है। आज की पीढ़ी को सोचना होगा कि यदि घर में बुजुर्ग नहीं है तो उनके लिए बच्चों की कहानियों का कोई मतलब नहीं है।

पीढ़ियों के अंतर का शिकार बुजुर्गों की जिंदगी –

डॉ. कुमारेंद्र सिंह सेंगर 'वृद्धावस्था' कविता में बुजुर्गों आत्मविवश जिंदगी को प्रस्तुत किया है। बुजुर्गों को इस बात का एहसास है कि वे स्वयं तो थक चुके ही हैं, जैसी भी हो उम्र काटनी ही है। लेकिन बुजुर्गों को दुःख इस बात का होता है कि जिन बच्चों को उन्होंने अपनी उँगली पकड़कर चलना सिखाया, वही बच्चे आज बड़े होने पर उन्हीं उँगलियों से ठेंगा दिखाते जा रहे हैं। कवि का कहना है "कल तलक जो थाम कर चले थे उँगली हमारी, आज वो ही उँगली दिखा रहे हैं। हमें समझ कर एक बेकार, नाकार वस्तु, किसी कोने में कबाड़खाने में लगा रहे हैं।"[7] कहना सही होगा कि कवि ने अपने ही परिवार से अपेक्षित किंतु उपेक्षित जिंदगी के शिकार वृद्ध की दयनीयता का परिचय दिया है। जिन बच्चों के महत्त्वपूर्ण आधार के रूप में बुजुर्गों ने अपनी भूमिका अदा की, यहाँ तक कि अपने बच्चों के बहुआयामी विकास के लिए सदा प्रयत्नशील रहें, उन्हें ही आज कबाड़खानें की बेकार वस्तु समझा जाने लगा है। उनका मानना है कि "अब आज के युवाओं को हमारी चाहत नहीं, उन्हें हमारे अनुभवों और तजुर्बों की जरूरत नहीं। वे जीना चाहते हैं, आज की तेज रफ्तार की जिंदगी को।"[8] स्पष्ट है कि आज के युवाओं में बुजुर्गों के प्रति किसी भी प्रकार की चाहत नहीं है। उन्हें बुजुर्गों के समृद्ध अनुभवों की भी आवश्यकता नहीं समझते। वे आधुनिकता की तेज रफ्तारवाली जिंदगी जीना चाहते हैं। बुजुर्गों के उन्हें किसी प्रकार के समझाने पर उन्हें पीढ़ियों के अंतर की दुहाई देने की साजिश करते हैं। कहना सही होगा कि पीढ़ियों के अंतर के नाम पर बुजुर्गों की अभिव्यक्ति को मुखिरित होने नहीं दिया जाता।

अपनेपन को तलाशती बूढ़ों की जिंदगी :

डॉ. अवन्तिका शेखावत ने 'पागल बुढ़िया' शीर्षक कविता में कचरा बीनती पागल बुढ़िया की दर्दभरी वाणी को प्रस्तुत किया है। पागल बुढ़िया भारतवर्ष में कचरा बीनती संपूर्ण बुजुर्ग पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करती है, जो विवशता की जिंदगी का शिकार है। कवयित्री

युवाओं के लिए दीये की तरह स्वयं जलकर दूसरों को सदा के लिए प्रकाश दे देते हैं। इसलिए स्वयं जलकर दूसरों के लिए प्रकाशदायी बननेवाले बुजुर्गों के प्रति भी अपना कुछ दायित्व बन जाता है, इस बात पर विचार करने के लिए कवयित्री बाध्य करती है। 'घर में बुजुर्ग होने का अर्थ' कविता में सुमित प्रताप सिंह ने घर में बुजुर्गों का साया किसी वटवृक्ष से कम नहीं है। घर में बुजुर्गों का होना व्यापक अर्थों में लिया जा सकता है। घर तथा परिवार के लिए बुजुर्ग पाठशाला की भाँति होते है। कवि का कहना है "घर में बुजुर्ग का होने का अर्थ है, जीवन की एक विशेष पाठशाला का होना,.. हमारे परिवार के चारों ओर, एक मजबूत चारदीवारी का होना"[5] स्पष्ट है कि परिवार की दृष्टि से बुजुर्गों का अनन्यसाधारण महत्त्व होता है। वे किसी पाठशाला से कम नहीं होते है। क्योंकि परिवार का हर कोई उनके मार्गदर्शन का जब चाहे लाभ उठा सकता है। परिवार की कड़ी सुरक्षा भी उन्हीं के बूते पर होती है। इसलिए परिवार में बुजुर्गों का होना जरूरी है। जो अपने व्यापक तजुर्बे। से नई पीढ़ी को हर समय लाभान्वित होने का अवसर प्रदान करते है।

आधुनिकता के प्रभाव में दबता बुजुर्ग –

संजय वर्मा 'दृष्टि' अपनी कविता 'आधुनिक' में बुजुर्गों का महत्त्व तथा आधुनिकता के कारण आए बदलाव एवं उसमें दबते बुजुर्गों का लेखा–जोखा प्रस्तुत करते हैं। भागदौड़ भरी जिंदगी और रोजी–रोटी की तलाश में व्यक्ति अपने परिवार की आधारशीला को ही नजरअंदाज करता दिखाई देता है। संजय वर्मा अपनी रचना में कहते हैं– "बूढ़े पग नहीं दबाए जाते अब क्यों, क्या जिंदगी आधुनिक हो गई बूढ़ों को संग ले जाने में शर्म हुई पागल अब क्यों ?...भागदौड़ भरी दुनिया में उनके पास बैठने का समय कहाँ ?"[6] आधुनिकता की चक्काचौंध ने आदमी की आदमियत मानों लापता हुई है। आधुनिकता के छत के नीचे दबी युवा पीढ़ी की जिंदगी अपने ही बुजुर्गों का खयाल रखने में असमर्थ दिखाई देती है। कवि कहता है कभी एक जमाना था, जब घर के बेटे घर के बुजुर्गों के पैर दबाते थे, यहाँ तक कि किसी अवसर पर बूढ़ों को भी अपने साथ ले जाते थे लेकिन आज स्थितियाँ बिल्कुल इसके उल्टी दिखाई देती है। बेटों को अपने माता–पिता के पैर दबाने के लिए समय नहीं है, न ही वह अपने साथ उन्हें ले जाने में गौरव महसूस करता है और न ही वह अपने माता–पिताओं के पास बैठने के लिए समय दे पाता है। आर्थिक अभावों के कारण हों, या आधुनिकता की हवा में बह जाने के कारण क्यों न हो आज की पीढ़ी अपने पारिवारिक दायित्वों से खुले आम विमुख होती जा रही है।

स्वाभाविक रूप से बुजुर्ग आधुनिकता की चक्की के पाटों में पिसता जा रहा है। इसलिए कवि बजुर्गों का आदर तथा सम्मान करने की पुरजोर अपील करता है। आज की पीढ़ी को सोचना होगा कि यदि घर में बुजुर्ग नहीं है तो उनके लिए बच्चों की कहानियों का कोई मतलब नहीं है।

पीढ़ियों के अंतर का शिकार बुजुर्गों की जिंदगी –

डॉ. कुमारेंद्र सिंह सेंगर 'वृद्धावस्था' कविता में बुजुर्गों आत्मविवश जिंदगी को प्रस्तुत किया है। बुजुर्गों को इस बात का एहसास है कि वे स्वयं तो थक चुके ही हैं, जैसी भी हो उम्र काटनी ही है। लेकिन बुजुर्गों को दुःख इस बात का होता है कि जिन बच्चों को उन्होंने अपनी उँगली पकड़कर चलना सिखाया, वही बच्चे आज बड़े होने पर उन्हीं उँगलियों से ठेंगा दिखाते जा रहे हैं। कवि का कहना है "कल तलक जो थाम कर चले थे उँगली हमारी, आज वो ही उँगली दिखा रहे हैं। हमें समझ कर एक बेकार, नाकार वस्तु, किसी कोने में कबाड़खाने में लगा रहे हैं।"[7] कहना सही होगा कि कवि ने अपने ही परिवार से अपेक्षित किंतु उपेक्षित जिंदगी के शिकार वृद्ध की दयनीयता का परिचय दिया है। जिन बच्चों के महत्त्वपूर्ण आधार के रूप में बुजुर्गों ने अपनी भूमिका अदा की, यहाँ तक कि अपने बच्चों के बहुआयामी विकास के लिए सदा प्रयत्नशील रहें, उन्हें ही आज कबाड़खानें की बेकार वस्तु समझा जाने लगा है। उनका मानना है कि "अब आज के युवाओं को हमारी चाहत नहीं, उन्हें हमारे अनुभवों और तजुर्बों की जरूरत नहीं। वे जीना चाहते हैं, आज की तेज रफ्तार की जिंदगी को।"[8] स्पष्ट है कि आज के युवाओं में बुजुर्गों के प्रति किसी भी प्रकार की चाहत नहीं है। उन्हें बुजुर्गों के समृद्ध अनुभवों की भी आवश्यकता नहीं समझते। वे आधुनिकता की तेज रफ्तारवाली जिंदगी जीना चाहते हैं। बुजुर्गों के उन्हें किसी प्रकार के समझाने पर उन्हें पीढ़ियों के अंतर की दुहाई देने की साजिश करते हैं। कहना सही होगा कि पीढ़ियों के अंतर के नाम पर बुजुर्गों की अभिव्यक्ति को मुखिरित होने नहीं दिया जाता।

अपनेपन को तलाशती बूढ़ों की जिंदगी :

डॉ. अवन्तिका शेखावत ने 'पागल बुढ़िया' शीर्षक कविता में कचरा बीनती पागल बुढ़िया की दर्दभरी वाणी को प्रस्तुत किया है। पागल बुढ़िया भारतवर्ष में कचरा बीनती संपूर्ण बुजुर्ग पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करती है, जो विवशता की जिंदगी का शिकार है। कवयित्री

कहती है "हम बदल गये हैं, हमारी रफ्तारें तेज हो गयी हैं, बड़ी खुदमिजाज है, कहती हाथ फैलाये जिंदगी पार नहीं होती, ये लो कोई कहता कमसिन बुढ़िया, कोई कचरेवाली बुढ़िया, हम तथाकथित शिक्षित पीढ़ी की अम्मा कहने की बात नहीं होती।"[9] कहना सही होगा कि आज की पीढ़ी तेज रफ्तार को ही अपनी जिंदगी मान रही है। बुजुर्गों के प्रति अपने कर्तव्य निभाने की अपेक्षा बुढ़ापे की शिकार कचरा बीननेवाली औरतों को ही कोई कमनसीब मानता है, कोई कचरेवाली मानता है। लेकिन आज की शिक्षित समझनेवाली पीढ़ी का कोई भी माई का लाल अम्मा कहने का साहस नहीं जुटा पाता है। पागल बुढ़िया की आँखे कचरे के ढेर में तथा शिक्षित समाज में अपनापन तलाशती हुई अपनी जिंदगी के दिन काटती है। बुढ़िया के सवालों का किसी के भी पास कोई उत्तर नहीं है। कवयित्री निश्चित ही पाठकों को सोचने के लिए बाध्य करती है।

पश्चिमी प्रभाव में वृद्धाश्रम का शिकार :

भारतीय संस्कृति अपने अनूठेपन के कारण दुनिया की आदर्श संस्कृति रही है। भारतवर्ष अपनी संयुक्तिक कुटुंबव्यवस्था के कारण बहुचर्चित रहा है। पश्चिमी देशों में वृद्धाश्रमों में माता–पिताओं का होना आजकल मानों प्रतिष्ठा का ही विषय बना है। पश्चिमी देशों के अंधानुकरण के कारण हम अपनी विरासत को किनारे करते जा रहे हैं। एल्विन टॉफ्लर का कहना है "पश्चिमी देशों में वृद्धों का सम्मान कम है। यहाँ के लोग उन्हें आउट डेटेड मानकर घर से बाहर कर देते हैं। इसलिए यहाँ वृद्धाश्रमों की संख्या बढ़ती जा रही है।"[9] इस कथन से स्पष्ट होता है कि हमने आधुनिकता के सकारात्मक अनुकरण की अपेक्षा अंधानुकरण को अत्यधिक महत्त्व दिया। जिससे हम अपनी संस्कृति को भी किनारे फेंकते जा रहे हैं। प्रभुदयाल श्रीवास्तव 'वृद्धावस्था' शीर्षक रचना में वृद्धाश्रमों में जानेवाले वृद्धजनों की परेशानियों एवं तकलीफों के कारणों की तलाश करते हुए कहते हैं–" दुर्बल–निर्बल जेठे–स्याने, वृद्धाश्रम में रहते क्यों हैं ? दूर हुए क्यों परिवारों से, दुःख तकलीफें सहते क्यों हैं ?... पश्चिम का भारत आना है, पश्चिम ने तो मात–पिता को केवल एक वस्तु माना है।"[10] द्रष्टव्य पंक्तियाँ इस बात की पुष्टि करती है कि भारतीय परिवार पश्चिम की हवा के कारण अपनी सांस्कृतिक जड़ों अर्थात् विरासत से कटते जा रहे हैं। पश्चिम में जहाँ माता–पिता को मात्र वस्तु माना जाता है, जिन्हें पुरानी हो जाने पर बाहर फेंकने की बात की जाती है। उसी पश्चिम का हम अंधानुकरण करते जा रहे है, जो तर्कसंगत नहीं है। पश्चिम से कितना प्रभावित होना है ? इस बात पर विचार करने के लिए कवि मजबूर करता है।

करियर के पीछे दौड़ता बेटा और गाँव पर माँ –

अपने करियर तथा रोजी रोटी की तलाश में भी आज के युवाओं को अपने माता–पिता की ओर ध्यान देने के लिए फुरसत नहीं है। जहाँ एक ओर अपने परिवार के प्रति दायित्व से युवा अवश्य प्रतिबद्ध है। लेकिन अपनी मजबूरी एवं करियर के कारण वह गाँव में रहती अपनी माँ से मिल भी नहीं सकता। डॉ. रमेश सोनी 'गाँव पर माँ' कविता में बेटा अपन घर छोड़कर दूर शहर में चला जाता है। करियर तथा अत्यधिक पाने की लालसा में वह बहुत कुछ खो भी देता है। कवि कहता है "वह तमाम उम्र, बॉस के लिए लिखता रहा चिट्ठियाँ, करता रहा सही। गाँव पर उसकी माँ, तमाम उम्र, अपने बेटे की एक चिट्ठी के लिए तरसती रही।"[12] द्रष्टव्य पंक्तियों से स्पष्ट होता है कि कवि ने करियर तथा नौकरी के कारण माँ तथा बेटे के टूटते रिश्ते और स्नेह के अभाव में दम तोड़ती माँ की दर्दभरी दास्तान उजागर की है। बेटे को अपने बॉस के सारे काम करने के लिए काफी समय है, लेकिन जन्मदात्री माँ को एक चिट्ठीभर लिखने के लिए उसके पास समय नहीं है। माँ, बेटे की चिट्ठी की प्रतीक्षा के लिए तरसती रहती है। लेकिन एक दिन प्रतीक्षा तथा बेटे की चिट्ठी की आकांक्षा के साथ–साथ गुजर जाती है।

निष्कर्ष –

उपर्युक्त विवेचन–विश्लेषण के पश्चात् कहा जा सकता है कि वृद्धजन विमर्श से संबंधित उक्त पहलू निश्चित ही पाठकों को सोचने के लिए मजबूर करते हैं। वर्तमान में वृद्धजन विमर्श चिंता की अपेक्षा चिंतन के लिए बाध्य करता है। गौरतलब है कि प्रेमचंद से लेकर आज तक के हिंदी साहित्य में इस विमर्श की दृष्टि से रचनाकारों की प्रतिबद्धता दृष्टिगत होती है। हिंदी साहित्य की कहानी, उपन्यास तथा काव्य में प्रस्तुत विमर्श पर काफी बहस परिलक्षित होती है। फिर भी आज के परिवेश के अनुरूप यह विमर्श व्यापक धरातल की माँग करते हुए उसके चरितार्थ की अपेक्षा रखता है। विवेचित कवि आज के प्रातिनिधिक कवि के रूप में लिए गए हैं। बुजुर्गों तथा वृद्धजनों का अपना स्वतंत्र अस्तित्व है जो नई तथा युवा पीढ़ी के लिए मार्गदर्शक एवं पथदर्शक रहा है। भारतीय युवाओं को पाश्चात्य अंधानुकरण से प्रभावित होने की अपेक्षा भारतीय संस्कृतिगत विरासत से भली–भाँति परिचित होना आवश्यक प्रतीत होता है। युवा पीढ़ी को उनके सम्मान एवं आदर को अपने जीवन के केंद्र में रखना समय की आवश्यकता परिलक्षित होती है।

संदर्भ संकेत :

1. http://m.dw.com/hi/cqtqxksZa
2. शर्मा ऋषभदेव (सं.)– वृद्धावस्था विमर्श, 2016, पृष्ठ–20, परिलेख प्रकाशन, नजीबाबाद
3. http:www.jansatta.com 9 sept. 2018
4. http:www.webdunia.com /hindi-poems/poem-1150 9
5. www.sumitpratapsingh.com/2017/10/blog-post.html hindi.webdunia.com/hindi-poems/poem-116060800034_1.html
6. http://kavita sangrah.blogspot.com/2009/03/blog-post_08.html
7. ogh
9- http://hindipoems.org/tag/

10 http://vimarshmedia.blogspot.com/2011/10/blog-post.html
11.http://hindi.webdunia.com/hindi-poems/senior-citizen-poems-117021000029_html

12. तश्केर (डॉ.) सुभाष (सं.) – काव्यायन, पृष्ठ–72, 2014, जयभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

****

8

वृद्ध जन–जीवन

डॉ. रमेश कुमार गोहे
सहा.प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
गुरु घासीदास वि.वि.बिलासपुर (छ.ग.)

हिन्दी कथा साहित्य में प्रेमचंद का स्थान महत्वपूर्ण है। प्रेमचंद कथा सम्राट हैं। उन्होंने समाज में व्याप्त विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों से निर्मित मानवीय वृत्तियों को अपनी कथा लेखन का हिस्सा बनाया है। चाहें वे फिर सामाजिक विसंगतियां हो या मानुषिक प्रवृत्तिगत विसंगतियां हो। न्याय, नीति, सदाचार आदि पर बड़ी बारीकी से लिखे साहित्य में लगभग सभी मूल्यों को समाविष्ट किया गया है। वृद्धजन पर नौ से दस कहानी में वृद्धजन विमर्श को जगह दी है। प्रेमचंद के समय में कोई अलग–अलग विमर्श ना होने के बाद भी प्रेमचंद ने समाज के लगभग सभी मूल्यों को समेकित करने वाला साहित्य लिखा जिन्हें आज हम विमर्शो में बांट कर देखते हैं।

अगर वृद्धजन जीवन की दृष्टि से देखा जाये तो प्रेमचंद ने बेटों वाली विधवा, बूढ़ी काकी, अलग्योझा, मां, मंत्र, स्वामिनी, विध्वंस, सुभागी, ईदगाह आदि कहानियां लिखी है। बूढ़ी काकी, सुभागी, ईदगाह, बेटों वाली विधवा आदि कहानियां देश के तमाम पाठ्यक्रमों में पढ़कर ही एक विद्यार्थी आगे बढ़ता है। भारत में कुल परिवार व्यवस्था नगरीय तथा विदेश प्रवास के साथ ही वृद्धजन की देख–रेख , सेवा चाकरी, स्वास्थ्य आदि पर ध्यान देने का समय उनकी संतानों के पास नहीं रह गया है। ग्लोबल गाँव में धरती पर औद्योगिक विकास व्यक्तिगत आर्थिक विकास भी खूब हुआ है पर सामाजिक रूप से सब कुछ छिन्न–भिन्न हो गया है। दो–माँ–बाप चार संतानों में बँट जाते हैं। कभी बहू की झिड़की, तो कभी नाती–पोतों का अलगाव आदि से उनका मन इस से ऊबा जा रहा है। धीरे–धीरे उनके कार्य करने की झमता के साथ, परिवार में अधिकार भी कम होते जा रहा है। उनकी अधिकार और अर्थ सत्ता, निर्णय सत्ता धीरे–धीरे खत्म होकर बेटों में स्थानांतरित होते जा रहे हैं। उषा प्रयंवदा की 'वापसी' इसका सटीक

Impact Factor – 6.261 ISSN – 2348-7143
INTERNATIONAL RESEARCH FELLOWS ASSOCIATION

RESEARCH JOURNEY

INTERNATIONAL E-RESEARCH JOURNAL

PEER REFREED & INDEXED JOURNAL
February - 2019 Special Issue – 115 (A)

India : Yesterday, Today & Tomorrow

भारत : काल, आज आणि उद्या

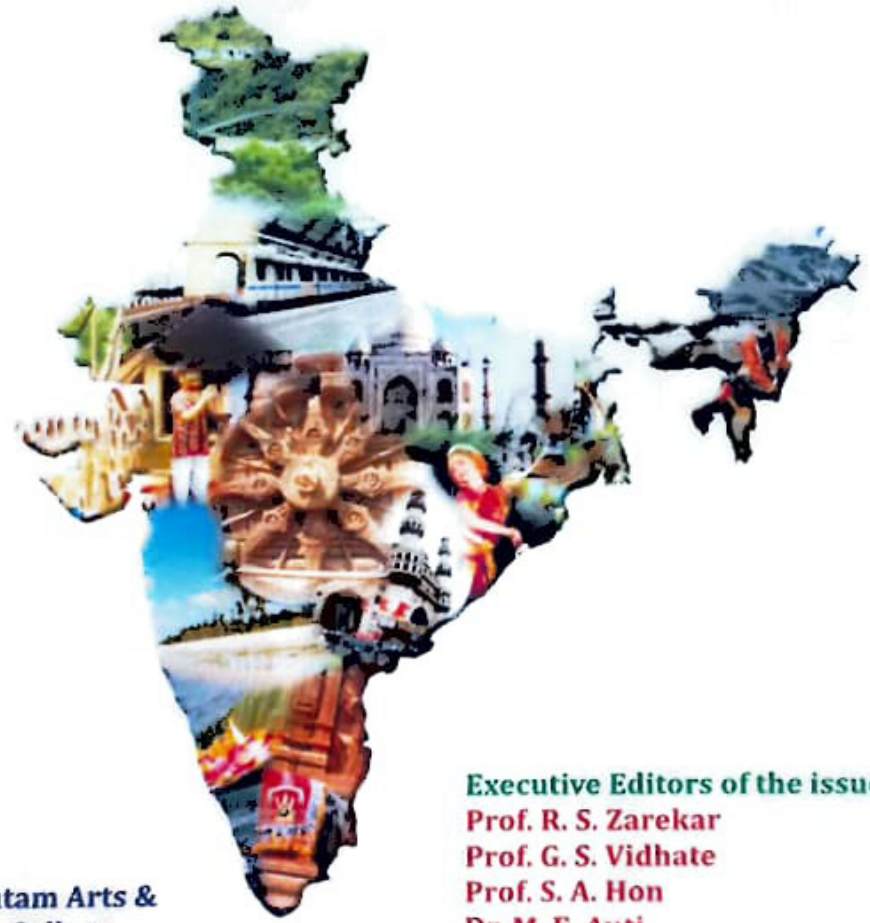

Guest Editor :
Dr. A. B. Nikumbh
I/C Principal,
S.S.G.M. Science, Gautam Arts &
Sanjivani Commerce College,
Kopargaon, Tal. Kopargaon, Dist. Ahmednagar

Executive Editors of the issue :
Prof. R. S. Zarekar
Prof. G. S. Vidhate
Prof. S. A. Hon
Dr. M. E. Auti

Chief Editor :
Dr. Dhanraj Dhangar (Yeola)

This Journal is indexed in :
- UGC Approved Journal
- Scientific Journal Impact Factor (SJIF)
- Cosmos Impact Factor (CIF)
- Global Impact Factor (GIF)
- International Impact Factor Services (IIFS)
- Indian Citation Index (ICI)
- Dictionary of Research Journal Index (DRJI)

SWATIDHAN PUBLICATIONS

Impact Factor – 6.261

ISSN – 2348-7143

INTERNATIONAL RESEARCH FELLOWS ASSOCIATION'S

RESEARCH JOURNEY

International E-Research Journal

PEER REFREED & INDEXED JOURNAL

February -2019 Special Issue – 115 (A)

India : Yesterday, Today & Tomorrow
भारत : काल, आज आणि उद्या

Guest Editor:
Dr. A. B. Nikumbh,
I/C Principal,
S.S.G.M. Science, Gautam arts & Sanjivani Commerce College,
Kopargaon, Tal. Kopargaon, Dist. Ahmednagar

Executive Editor of the issue:
Prof. R. S. Zarekar
Prof. G. S. Vidhate
Prof. S. A. Hon
Dr. M. E. Auti

Chief Editor:
Dr. Dhanraj Dhnagar (Yeola)

SWATIDHAN INTERNATIONAL PUBLICATIONS
For Details Visit To : www.researchjourney.net

© All rights reserved with the authors & publisher

Price : Rs. 800/-

INDEX

No.	Title of the Paper	Author's Name	Page No.
1	Tilak's Kesari : Past, Present and Future Perspectives	Dr. Nalini Waghmare	05
2	Higher Education in India in the Era of Globalization : Challenges and Opportunities	Dr. Ahmad Shamshad	10
3	Indian Economy - Achievements and Failures	Dr. G. D. Kharat	21
4	Region wise Disparity of Micro, Small and Medium Enterprises in Maharashtra	Mr. Uddhav Ghodake & Mr. Mari G.	27
5	Recent Trends in India's Balance of Payments	Dr. Yogita Kopate	32
6	Media and Development of India	Prof. Nirmal Ekanath Sitaram	35
7	Opportunities and Challenges of Skill Development in India	Dr. Vinod Bairagi	39
8	Analyzing The Demonetization Impact in India	Dr. Yogita Bhilore	42
9	Impact of Liberalization on Life Insurance Sector	Mrs. Priyanka Patil & Mr. Nileshkumar Gurav	45
10	Globalization and Its Impact on Indian Industrial Sector	Dr. S. R. Jawale	50
11	Feminism in Indian English Poetry	Mr. Jitendra Patil	54
12	Past, Present and Future of Public Debt of India	Prof. Maharudra Khose & Dr. Shivaji Ambhore	59
13	An Appraisal of Work Participation in Agricultural and Non-Agricultural Sector in Ahmednagar District of Maharashtra	Dr. Sachin Pawar	62
14	Social Status of Women and Their Importance in Tribal Communities of Konkan Region	Dr Dilip Telang & Dr Namdev Dhale	69
15	Challenges before India in 21st Century	Mr. Vijay Patole	72
16	Challenges before Indian Democracy in 21st Century	Shri. Shivaji Dhokane.	77
17	Reinterpretation of Political and Economic Life of Central India under Minor Dynasties in C6th- C7tha. A.D.	Dr. Amitabh Kumar	81
18	Origin of Social Violence in Indian Society	Dr. S. D.Varpe, Prof. P.B. Sawant	85
19	Time: A Great Transformer of Theme in Indian Writing in English	Mrs. Shruti Tiwari	88
20	Hurdles in The Growth of Indian Economy	Dr. Swati Sharma	91
21	Importance of Vedic Mathematics in Today's Education System	Prof. Bhakti Tambe	94
22	Feminist Rebeliion in Tarabai Shinde's Exellent Essay, 'A Comparison Between Women and Men'	Prof. Hemant Pawar	99
23	भारत : कल, आज और कल	डॉ.संतोष कुमार चतुर्वेदी	101
24	वैश्विकरण, निजीकरण एवं उदारीकरण का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव	डॉ. अर्चना मोडक	108
25	छत्तीसगढ मे नगरीकरण की प्रवृत्ती	डॉ. पुष्पा श्रीवास	111
26	अष्टछाप के कृष्ण कवि नंददास	डॉ. योगेश दाणे	114
27	इदिरा आवास योजनांच्या माहितीचा आभ्यास	दत्तात्रय छत्रे	119
28	कृषी विकास अहमदनगर जिल्यातील शेतीक्षेत्रावर झालेल्या परिणामांचा चिकित्सक अभ्यास	ज्योती गायकवाड व डॉ.राजेंद्र भोसले	122
29	आदिवासी समाजाच्या समस्या	रविंद्र मोरे	128

'RESEARCH JOURNEY' International E- Research Journal
Impact Factor - (SJIF) - 6.261, (CIF) - 3.452(2015), (GIF)-0.676 (2013)
Special Issue 115 (A)- India : Yesterday, Today & Tomorrow
UGC Approved Journal
ISSN : 2348-7143
February-2019

Media and Development of India

Prof.Nirmal Ekanath Sitaram,
PVP College, Pravaranagar
E-mail : nirmal_ekanath@rediffmail.com

The Indian Media

The Indian Media and Entertainment (M&E) industry is a sunrise sector for the economy and is making high growth strides. Proving its resilience to the world, the Indian M&E industry is on the cusp of a strong phase of growth, backed by rising consumer demand and improving advertising revenues. The industry has been largely driven by increasing digitisation and higher internet usage over the last decade. Internet has almost become a mainstream media for entertainment for most of the people.

"If it were left on me to decide whether we should have a government without newspapers or newspapers without a government, I should not hesitate a movement to prefer the letter." – Thomas Jefferson

Radio

The number of radio stations has increased from about 100 in 1990 to 209 in 1997, and the land area covered from 84% to 91%. However, despite its tremendous reach and the fact that it presents the best option for low-cost programming, radio has been treated as a poor relative for over two decades. Listenership has either dropped or reached a plateau. In some cases listenership has risen, although very negligibly, in some urban areas, thanks to the recent time allotment to private companies on five FM stations. Film and other popular music constitute the main fare of such stations, contributing to an increase in commercial time and ad revenues from Rs. 527 million in 1991-2 to Rs. 809 million in 1995-96.

Some efforts have been made to use radio for social change, as in the case of the state-supported radio rural forums for agricultural communication in the 1960s, or to promote adult literacy in the 1980s. More recently NGOs have helped broadcast programmes on women and legal rights, emergency contraception, and teleserials advocating girls' education. But it is clearly a medium waiting for a shot-in-the-arm.

A key need in India is for local broadcasting that reflects issues of concern to the community. In this regard, some communication experts believe that an increased and accelerated commercialisation of radio will eventually drive down the costs of FM radio sets, thus facilitating local radio. The increasing devolution of political power initiated through the 73rd and 74th amendment to the constitution in 1988-89 has also set a climate conducive for the empowerment of communities and local governance. A key area requiring attention, therefore, is advocacy for community radio and the provision of training to NGOs and communities to use this medium for articulating their concerns, as one Bangalore-based NGO is currently doing.

Television

The number of private television channels has increased from none in 1990 to more than 50 this year. Entertainment constitutes about 51% of the total programme content, even though some channels such as Star Plus follow CNN's example in delivering "news on the

hour, every hour." News and education constitute a mere 13.3% and 9.6% of programme content.

However, in a bid to give themselves a halo of social responsibility, some channels broadcast programmes with a veneer of public interest: soaps that incorporate socially relevant themes such as women's education and empowerment, interactive talk shows on whether smoking should be banned, and open forums with government representatives responding to audience queries on human rights abuses or consumer rights.

These programmes combine varying degrees of social value with commercial appeal in a competitive market. The open forums, in particular, have played an important role in familiarising the public to the political and legal system and in building a demand for political transparency and accountability.

Another genre, that of the "edutainment" prosocial soap continues with serials such as Tara which dealt with the life of a strong-willed woman. However, while the first Indian edutainment soap Hum Log (1985) transfixed much of the nation (to a lesser degree in the southern non-Hindi speaking part of the country) the audiences for subsequent edutainment serials have been comparatively smaller. There is no longer the captive audience of the mid-80s, and there are several competing channels and soaps to choose from. These include reruns of long running teleserials of the late 1980s such as the Ramayana and the Mahabharata which enjoy cult-like status.

An emerging trend – and one that also reflects the current programme focus of development agencies – is the targeting of specific segments of the audience, in particular, young adults (children and youth in the age group of 10-29 years constitute about 40% of the population). Urban, middle to upper class youth, especially, constitute a key target group for private channels. Music channels such as MTV and Channel V, which rank among the top ten favorite channels, feature VJs who are popular role models for a young generation (One such popular VJ coos: "Being fit is cool; not smoking is cool").

Cashing in on this trend, UNAIDS, India initiated in 1996 a collaboration with Channel V for an on-air and on-ground campaign for HIV/AIDS awareness. The collaboration includes training and sensitisation of VJs on issues relating to HIV/AIDS. In another effort, the Ford Foundation, India funded a BBC training for radio and television producers on reproductive and sexual health. The six project proposals shortlisted for additional funding, all of which target children and youth, are in entertainment formats of musicals, talk shows and animation.

Print Media

Given national literacy rates as low as 51%, the very limited reach of newspapers and magazines, and the distinctly urban educated readership profile, the role of print media has been defined more in terms of information dissemination and advocacy. The picture is a lopsided one: circulation figures are rapidly increasing as are advertising revenues, but this is especially true of English publications (refer Media Index, Table 2), which account for 71% of the total ad revenue of members of the Indian Newspaper Society.

A key feature of these publications, unfortunately, is the increasing preponderance of glossy, ad-friendly film and TV-based reporting. That the sole trendsetter in this increasing corporatisation of the fourth estate, the Times of India, also ranks 10th among the top-

selling newspapers in the world, is no coincidence. Given the increasing costs of newsprint and production, and the pressure of market imperatives, newspaper houses have followed the piper in carrying ad -friendly fluff at the cost of more serious development and health reporting. Leading dailies have over the last few years dropped their special sections devoted to development and health. The low literacy rates and high production costs have also stymied the possibilities of smaller alternative publications that could potentially reflect the concerns of the development sector.

The Internet

Recognising that access to information and information technologies play a key role in development, especially given the constraints of the mass media, groups of non-profit documentation centers in the country have developed communications systems such as Indialink and Dianet that are focussed solely on development issues. By providing connectivity to grassroots NGOs and emphasising the documentation and information from within the country (refer case description Democratisation of Information), these efforts have facilitated greater grassroots involvement in development and South-South dialogue. However, the extremely low access to internet – there are a mere 90,000 internet subscribers in the country, bringing the density to below decimal points – is a key hindrant.

A World Bank funded project for National Agricultural Technology envisages a similar democratisation through the establishment of "information kiosks" in rural areas (refer interview with Kiran Karnik). The proposed project sees the expansion of public pay-phone offices that have mushroomed all over the country, including rural areas, into centers with computers for the inputting and accessing of data relevant to rural populations.

Traditional theater/media

Traditional folk media forms, once a favorite for communication efforts, are today precariously placed. Some agencies and NGOs continue to use street theater, magic, puppetry, traditional folk dances and melas (fairs) especially in rural areas. Some of these efforts are hugely successful in awareness creation, social mobilisation and in facilitating interpersonal communication. However, the absence of funding and technical support, their inherent fluid structure and the difficulty in monitoring and evaluation have rendered them near-relics in today's environment. So much so that one Bangalore-based NGO, while using such traditional folk forms, also feels compelled to address the basic survival needs of folk artistes such as provision of basic wages, training, pensions and other schemes.

Development Organisations: Responses The current media trends indicate three broad areas of need in terms of social change communication: increasing the quantity and quality of media reporting and programming on development issues; creating a demand for these programmes; creating and facilitating media space for such materials. The efforts of most development agencies and NGOs are focussed primarily on the first area, increasing media coverage on specific subject areas. Workshops and fellowships for information dissemination and upgrading of knowledge continue to be the stock-in-trade strategy, and have yielded positive results, especially with print media. But they do not address the need to institutionalise these efforts. How effectively stories and programmes on diarrhoeal control or microcredit will survive in the media marketplace continues to be a hazardous guess.

But the marketplace is defined by demand – and it was precisely to increase the demand for quality, need-based programming that a Delhi based-NGO established media Viewership Forums. Through these forums audiences from both lower and middle classes are taught media literacy, recognise their rights as media "consumers" and are beginning to demand better, socially-relevant programming (refer case description Media Education and Literacy). In a country which has never really had exposure to, or experience with, public service broadcasting, such as effort is critical.

Social Media in Indian Politics

Social media is not only confined to you and me but to politicians as well. Through different activities politics and politicians in India have brought social media into the limelight. It is expected that social media will play a huge role and influence the coming general elections to a great extent. The study by IRIS Knowledge Foundation and supported by the Internet and Mobile Association of India (IAMAI) has indicated this fact. Social media will be real game changer with political leaders having millions of fans on Twitter and supporters on Facebook as well as Google+. In order to build a certain image, most of the politicians also have their own websites. A few examples:

All the recent lectures by Gujarat chief minister Narendra Modi got huge social media attention. He even hosted a political conference on Google+ hangouts and this makes him the third politician across the globe to do this after Obama and Australian PM Julia Gillard. Ajay Degan hosted his Google+ Hangout in which the common man was free to ask live questions from him. He has a strong presence on YouTube, Facebook and Twitter.

Shashi Tharoor is very active on Twitter and his tweets are quoted in mainstream media. Few months back, you must have seen a page on Facebook seeking Dr. Abdul Kalam as president of India. Then there is Anna Hazare's Social Media Campaign against corruption in India. Many researchers have indicated that social media would be stronger and more persuasive than television in influencing people.

Conclusion

The media has been largely driven by increasing digitisation and higher internet usage over the last decade. Internet has almost become a mainstream media for entertainment for most of the people.

References

1. http://comminit.com/ict-4-development/content/changing-face-indian-media-implications-development-organisations
2. https://www.ibef.org/industry/media-entertainment-india.aspx
3. http://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/203650/11/11_chapter5.pdf
4. comminit.com/...development/.../changing-face-indi...
5. https://www.ibef.org › Industry
6. https://www.researchgate.net/.../216422046_SOCIA
   https://www.ciiblog.in/the-indian-media-and-entertai.
   https://www.ciiblog.in/the-indian-media-and-entertai.

COSMOS IMPACT FACTOR

Search

HOME | INDEXED JOURNAL | SUGGEST JOURNAL | REQUEST IF | DOWNLOAD LOGO | REFERENCES

Category

- INDEXED JOURNAL
- SUGGEST JOURNAL
- JOURNAL IF
- REQUEST FOR IF
- DOWNLOAD LOGO
- CONTACT US

SAMPLE CERTIFICATE

SAMPLE EVALUATION SHEET

Journal Detail

Journal Name	RESEARCH JOURNEY
ISSN/EISSN	2348-7143
Country	IN
Frequency	Quarterly
Journal Discipline	General Science
Year of First Publication	2014
Web Site	www.researchjourney.net
Editor	Prof. Dhanraj Dhangar & Prof. Gajanan Wankhede
Indexed	Yes
Email	researchjourney2014@gmail.com
Phone No.	+91 7709752380
Cosmos Impact Factor	2015 : 3.452

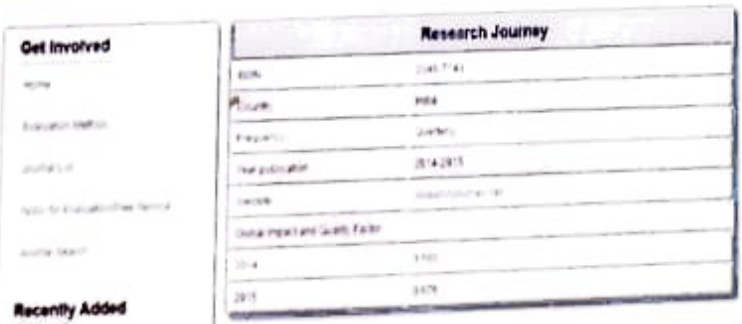

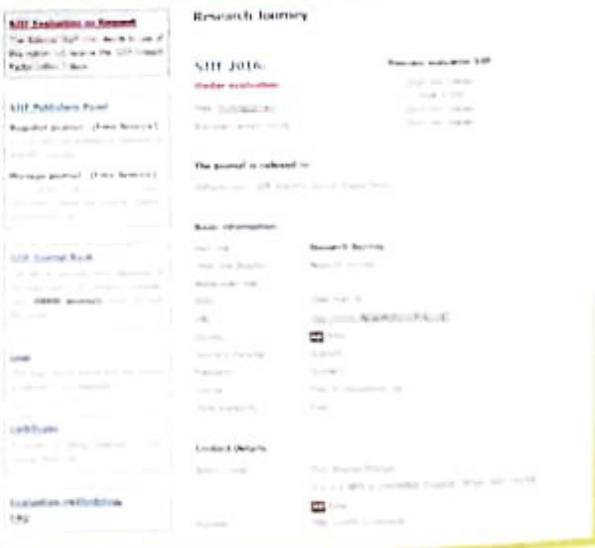

SWATIDHAN PUBLICATIONS

For Details Visit To : www.researchjourney.net

Price : Rs. 800/-

20879

Impact Factor 2.143
ISSN- 2319-8648
INTERNATIONAL RESEARCH FELLOW ASSOCIATION'S

Current Global Reviewer

Multidiciplinary international research journal
PEER REVIEWED & INDEXED JOURNAL
18th ,19th January 2019

जनसंचार माध्यम और हिंदी

संपादक
अरुण बी. गोवाम

सहसंपादक
डॉ. ऐनूर एस. शेख
हिंदी विभागाध्यक्षा कला, विज्ञान व वाणिज्य महाविद्यालय,
राहाता

कार्यकारी संपादक
प्रा. दादासाहेब एन. डगे
हिंदी विभाग,
हिंदी विभागाध्यक्षा कला, विज्ञान व वाणिज्य महाविद्यालय,
राहाता

www.rjournals.co.in

Scanned by CamScanner

Scanned with OKEN Scanner

Editoral Board Member

Dr. N.J. Waghmare
Research Guide & Head,
Dept of Pali,
Govt. Sanatketar College,
Shivani, (M.P.)

Dr. Bharat Handibag
Dean, Fculty of Arts,
Dr.B.A.M.University Aurangabd.(M.S.)

Dr. U.T. Gaikwad
Dept. of Geography,
Smt. S. D. M. College
Latur, Dist. Latur (M.S.)

Pro. S.B. Karande
Dept. of Economics,
Shri Bhausaheb Vartak College,
Borivali (W), Dist. Mumbai

B.J. Hirve
Dept. of botany
Vasant Mahavidyalaya,
Kaij, Dist. Beed. (M.S.)

Dr. Gopal S. Bhosale
Head, Dept. of Hindi,
Janvikas College,
Bansarola, Dist. Beed (M.S.)

Dr. B.T. Lahane
Principal, Head, Dept. of English,
Sambhajirao Kendre College,
Jalkot, Dist. Latur (M.S.)

Dr U.V.Panchal
H.O.D ,Dept of Commerce,
Deogiri College,
Aurangabad, Dist. Aurangabad

Dr M.U. Yusuf
Assistant Professor,
Dept of Commerce,
Sir Sayyed College,
Auranbadad, Dist. Aurangabad

S. R. Uchale
Librarian,
Shri Bhausaheb Vartak College,
Borivali (W), Mumbai

S.R. Kadam
Head, Dept. of History,
Janvikas College,
Bansorala, Dist. Beed (M.S.)

Dr. Gopal S. Bhosale
Head, Dept. of Hindi,
Janvikas College,
Bansarola, Dist. Beed (M.S.)

Dr. Hanumant Mane
Research Guide & Head, Dept. of Marathi,
Shivchatrapati College,
Kalam, Dist. Osmanabad(M.S.)

Prof. Mohan S. Kamble
Dept. of Marathi,
Janvikas Mahavidyalay,
Bansarola, Dist. Beed (M.S.)

Prof.Chitade Nandkishor
Dept. of Economics,
Janvikas Mahavidyalay,
Bansarola, Dist. Beed (M.S.)

Dr.Koshidgewar Bhasker
H.O.D (Computer Science)
Vai D.M Deglurkar College,
Degloor, Dt. Nanded (M.S)

Scanned by CamScanner

Scanned with OKEN Scanner

अनुक्रमणिका

अ.न.	आलेख शीर्षक एवं लेखक	पृष्ठ
1	जनसंचार माध्यम और हिंदी— डॉ. शहाबुद्दीन नियाज मुहम्मद शेख	9
2	मेसर बोर्ड प्रणाली— डॉ. ईश्वर पवार	12
3	सूचना प्रौद्योगिकी और हिंदी— डॉ. हनुमंत जगताप	15
4	हिंदी की वर्तमान साहित्यिक पत्रिकाओं का योगदान— डॉ. रेखी अमरजा अजीज	18
5	गांधी के जनसम्पर्क की भाषा – हिंदी — डॉ. जवाहर कर्नावट	21
6	जो बात हिंदी में है; विज्ञापनों में हिंदी की ताकत— डॉ. गोविंद बुरसे	24
7	सोशल मीडिया और वर्तमान समाज— डॉ. समीर गुलाब सय्यद	29
8	इंटरनेट और हिंदी — डॉ. अशोक द्रोपद गायकवाड	32
9	इलेक्ट्रॉनिक जनसंचार माध्यमो में हिंदी का प्रयोग — डॉ. दत्तात्रय टिळेकर	36
10	विज्ञापन और हिंदी — डॉ. अनंत केदारे	40
11	जनसंचार माध्यमों में हिंदी की भूमिका — डॉ. ऐनूर एस. शेख	46
12	जनसंचार माध्यम और हिंदी — डॉ. भरत शेणकर	48
13	इंटरनेट और हिन्दी — डॉ. अनिता वेताळ /अत्रे	51
14	जनसंचार माध्यमों की भाषा :हिंदी — प्रा. डी. एन. डांगे	53
15	अंतर्जालीय हिंदी ई–पत्रिका 'गर्भनाल' : सोच और अभिव्यक्ति — डॉ. भाऊसाहेब नवले	55
16	दूरदर्शन और हिंदी — डॉ. शशी साळुंखे	58

Scanned by CamScanner

Scanned with OKEN Scanner

विज्ञापन और हिंदी

डॉ. अनंत केदारे
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय, सावळ गहुरी,

सारांश :
राजभाषा हिंदी में विज्ञापन होने के कारण भारत के कोने–कोने तक वह पहुँचता है। वैश्वीकरण के युग में विज्ञापन की भाषा की भूमिका महत्वपूर्ण है। इसमें कोई संशय नहीं कि विज्ञापन की भाषा की हैसीयत से हिंदी सर्वश्रेष्ठ है। विज्ञापन के उद्देश्यों की पूर्ति विज्ञापन की भाषा पर सर्वथा निर्भर है वरन उत्पादकर्ता को जो संदेश ग्राहकों तक पहुँचना है वह सफल नहीं होगा। भाषा की हैसीयत से हिंदी सर्वोत्तम है लेकिन तकनीकी प्रयोग मे जैसे टंकन आदि मामलों मे देवनागरी लिपि कुछ बाधक है। देवनागरी लिपि के क्लिष्ट ध्वनि चिह्नों को सुधारणा होगा अथवा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर रोमन लिपि का प्रयोग करना होगा। संस्कृतप्रचुर, तत्समप्रधान हिंदी को त्यागकर उर्दूमिश्रित, सरल, प्रवाही, रंजक, काव्यात्मक हिंदी भाषा का प्रयोग विज्ञापन के लिए करना चाहिए यही वैश्वीकरण के युग में विज्ञापन की भाषा की माँग है। इस दृष्टि से प्रस्तुत शोधालेख में विचार किया गया है।

प्रस्तावना :
आधुनिक युग सूचना और प्रौद्योगिकी का माना जाता है। आज सूचना प्रौद्योगिकी के साथ संदेश वहन के विभिन्न साधन विकसित हो गये है। उनमें जनसंचार माध्यमों का उल्लेख करना पड़ेगा। कुछ जनसंचार माध्यमों की क्षमता देखकर हैरत होती है। जनसंचार माध्यम मनुष्य को मिला हुआ वरदान है। ज्ञान का प्रचार और प्रसार करने में उसका बहुत बड़ा योगदान है। आधुनिक युग सूचना और प्रौद्योगिकी के साथ संदेष वहन के विभिन्न साधन दुनिया के कोने–कोने में घटित होनेवाली घटनाओं की जानकारी प्राप्त करा देना, मनोरंजन करना तथा विचारों का आदान प्रदान करना जनसंचार माध्यमों के जरिए संभव हुआ है। आधुनिक काल में कंम्प्युटर की सहायता से मुद्रण कार्य द्रुत गति से साथ सुंदरता के साथ करना मुमकिन हो गया है। इक्कीसवीं सदी में विज्ञापन ने मनुश्य मात्र के झकझोरकर रख दिया। व्यापार, उद्योग, बाजार आदि सभी क्षेत्रों में वैश्वीकरण होने के कारण प्रिंट मीडिया तथा इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का वैष्वीक स्तर पर प्रसार हो गया है। जनसंचार माध्यमों में हुई क्र ांति के कारण दूरियाँ मिट गई और पूरा विष्व एक बाजार बन गया है। इसलिए अतर्राश्ट्रीय सीमाएँ भी टूटती नजर आ रही है। समाचारपत्र, आकाशवाणी, दूरदर्शन, कंप्युटर, इंटरनेट आदि जनसंचार माध्यमों पर प्रसारित होनेवाले विज्ञापनो का महत्त्व दिनोदिन बढ़ता चला जा रहा है।

विज्ञापन : अर्थ स्वरुप एवं परिभाषा :
विज्ञापन पब्द अँग्रेजी के Advertising इस पब्द से बना है जा Ad तथा verto इन दो पब्दों की संधि से बना है। Ad का अर्थ होता है– जिस बाजू मे या की ओर तथा verto का अर्थ होता है– खींचना। ''ग्राहक का ध्यान किसी उत्पादित वस्तु की ओर खीचना याने विज्ञापन है।''[१] विज्ञापन इस संज्ञा को कई विद्वानो ने परिभाषित करने की कोशिश की है उनमे से कुछ यहाँ दृष्टव्य है।

१ फ्रँक प्रेसब्रे:
''मुद्रित,लिखित,मौखिक अथवा मिश्रित विक्रय कला विज्ञापन है। विज्ञापित वस्तु की बिक्री करना और उसका हित ध्यान मे रखकर व्यक्तिगत तथा सामूहिक प्रयत्नों के द्वारा जनता का मत अनुकूल करना विज्ञापन का लक्ष्य होता है।''

Scanned by CamScanner

Scanned with OKEN Scanner

२ पी जे ई लिटिलफिल्ड:

"अधिक मुनाफा कमाने के उद्देश्य से ग्राहक का मन मोड़कर उसके साथ संवाद स्थापित करने के लिए किया गया प्रयास विज्ञापन है।"

३ नेबस्टर:

"लोगों को जानकारी करा देने के लिए वस्तु और सेवा का प्रकाशन विज्ञापन है।"

४ पो.बोर्डन:

"लोगों को जानकारी प्राप्त कराने के लिए उनमें खरिददारी की प्रेरणा निर्माण होने के लिए मौखिक अथवा लिखित विधान विज्ञापन कहलाता है।"

अतः कहा जा सकता है कि विज्ञापन जानकारी देनेवाला तथा विक्री के लिए सहायता प्रदान करनेवाला एक साधन है। विज्ञापनकर्ता की इच्छा के अनुसार कृति करने के लिए बाध्य कनेवाली कल्पना, सेवा अथवा वस्तु के बारे में जो जानकारी विभिन्न माध्यमों के द्वारा प्रस्तुत की जाती है, उसे विज्ञापन कहा जाता है।

विज्ञापन के उद्देश्य :

गांधीजी ने पत्रकारिता पर विमर्श करते हुए उसके तीन प्रमुख उद्देष्य बताए थे।"पत्रकारिता का पहला उद्देश्य जनता की भावनाओं और इच्छाओं का समझना तथा उन्हें व्यक्त करना। दूसरा उद्देश्य जनता में वांछनीय भावनाओं को जागृत करना तथा तीसरा उद्देश्य सार्वजनीक दोषों को निर्भिकतापूर्क्क प्रकट करना।"[2] इन उद्देश्यों का सीधा संबंध जनता के साथ है। गांधीजी द्वारा बताए गए उद्देश्य विज्ञापन के लिए भी लागू होते हैं। अत: प्रेस की भूमिका महत्वपूर्ण बन जाती है। कुलमिलाकर विज्ञापन के निम्नांकित उद्देश्य गिनाए जाते हैं।

- "बिक्री बढ़ाना।
- वितरण खर्च में बचत करना।
- उत्पाद को प्रेरणा देना।
- ग्राहकों को शिक्षा देना।
- विक्रेता की मदद करना।
- कीमत एक–सी रखना।
- औद्योगिकरण को गति देना।
- उद्यम संस्था के लिए लौकिक मूल्य तैयार करना।
- व्यापारी माध्यमों को हटाना।
- ग्राहकों को सचेत करना।"[3]

विज्ञापन एक कला है। जिसमें वस्तु की लिखित, मुद्रित या चित्र के रुप में उपभोक्ताओं को जानकारी दी जाती है। "विज्ञापन का उद्देष्य उपभोक्ताओं को शिक्षित करके विक्रेताओं की मदद करना होता है जिससे उत्पादक को भी लाभ पहुँचे।"[4] उत्पाद का प्रचार और प्रसार करना विज्ञापन का अपने आप में एक उद्देश्य है।

विज्ञापन की भाषा के कुछ गुण :

१ **प्रभावात्मकता:**

प्रभावात्मकता दृश्टि से यदि हिंदी भाषा का विचार करें तो हिंदी एक असरदार भाषा है। हिंदुस्तान में हिंदी ही एकमात्र ऐसी भाषा है जो अहिंदीभाषी प्रदेशों में भी बड़े चाव से बोली जाती है एवं समझी जाती है। हिंदी का प्रभाव जन–सामान्य के दिल और दिमाग पर अंकित होता है। हिंदी के कुछ विज्ञापन केवल हिंदी में होने के कारण वे अधिक असरदार साबित होते है। उन्हीं हिंदी विज्ञापनों को जब क्षेत्रीय भाषा जैसे मराठी में परिवर्तीत कर जब पेश किया जाताहै। तो वे अपना प्रभाव खो देते है।

Scanned by CamScanner

Scanned with OKEN Scanner

- लाइफबॉय है जहाँ,तंदुरूस्ती है वहाँ!
- टाटा नमक,देश का नमक!
- आज तक,सबसे तेज!
- कुछ करने से पहले कुछ मीठा हो जाए!
- विक्स की गोली लो,खींच–खींच दूर करो।
- सुर्रर्र के पियो– रेड लेबल!
- एक आयडिया जो बदल दे आपकी दुनिया!
- खुशियों की चाबी–टाटा नॅनो!
- हीरा है सदा के लिए–तनिश्क!
- कछुआ जलाओ, मच्छर भगाओ!
- हमारा बजाज–बजाज स्कूटर!
- एक बाम–तीन काम–झंडू बाम!
- बबूल बबूल पैसे वसूल!
- जी–माने–जीनीयस–पारले जी!

विज्ञापन का सबसे अहम् उद्देष्य होता है– बिक्री को बढ़ाना। विज्ञापन की भाषा वह होनी चाहिए जो अधिक से अधिक लोगों द्वारा समझी जाए। इस दृश्टि से विचार करे तो हिंदी कष्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक बोली जाती है तथा हिंदूस्थान में हिंदी बोलनेवालों की संख्या सर्वाधिक है। भारत जैसे बहुभाषी राष्ट्र में कई क्षेत्रीय भाषाएँ है। अलग–अलग क्षेत्रीय भाषाओ में विज्ञापन करना अधिक खर्चीला होगा लेकिन हिंदी जैसी राष्ट्रीय भाषा विज्ञापन के लिए प्रयुक्त करने के कारण खर्च में बचत होती है। विज्ञापन की भाषा हिंदी होने के कारण एक साथ विषाल जनसमुदाय तक पहुँचती है तथा ग्राहकों की संख्या में वृद्धि होती है। ''इससे उत्पाद को बढ़ावा मिलता है। जिसका एक फायदा यह भी होता है कि रोजगार में बढ़त होती है।''[७]

विज्ञापन की भाषा हिंदी होने के कारण ग्राहकों को षिक्षा मिलती है। कौन–कौन से उत्पाद बाजार में आ गए है। उनका प्रयोग कैसे करना चाहिए। उनकी खुबियाँ क्या है। उनको किमतें कितनी है आदि कई बातों की जानकारी आसानी से ग्राहकों को मिलती है। विज्ञापनकर्ता का जो उद्देष्य होता है वह सफल होता है। ग्राहकों को वस्तु के बारे में जानकारी मिलने से विक्रेता का काम आसान हो जाता है। ग्राहक खुद होकर किसी वस्तु की माँग करते हैं। कभी–कभार कुछ विक्रेता जान–बुझकर कुछ वस्तुओं को अधिक दाम में बेचते है लेकिन विज्ञापन में कीमत का भी जिक्र होने के कारण किमतें स्थिर रहती है।

राजभाषा हिंदी में विज्ञापन होने के कारण भारत के कोने–कोने तक वह पहुँचता है। वैष्वीकरण के युग में विज्ञापन की भाषा की भूमिका महत्वपूर्ण है। इसमे कोई दोराय नहीं कि विज्ञापन की भाषा की हैसीयत से हिंदी सर्वश्रेश्ठ है। कप्युटर से लेकर इंटरनेट तक और मोबाइल से लेकर सिनेमा तक हिंदी का प्रयोग दिनो दिन बढता चला जा रहा है। विज्ञापन के उद्देश्यों की पूर्ति विज्ञापन की भाषा पर सर्वथा निर्भर है वरन उत्पादकर्ता को जो सदेश ग्राहकों तक पहुँचना है वह सफल नहीं होगा। इस दृष्टि से भी विचार होने की आवश्यकता है।

भाषा की हैसीयत से हिंदी सर्वोत्तम है लेकिन तकनीकी प्रयोग मे जैसे टंकन आदि मामलों में देवनागरी लिपि कुछ बाधक है। देवनागरी लिपि के कुछ ध्वनि चिहन ऐसे हैं जिन्हें शुध्द रूप से टंकित करना काफी कष्टप्रद कार्य है। इसलिए आजकल के विज्ञापनों मे प्रयुक्त होती तो हिंदी भाषा है लेकिन टंकन की लिपि रोमन होती है। इससे एक सुविधा होती है की राश्ट्रीय और अंतर्राश्ट्रीय स्तर पर अन्य भाषा में अनुवाद देने की आवष्यकता नहीं होती। हिंदुस्तान में विज्ञापन दो भाषाओं मे होते हैं। एक

Scanned by CamScanner

Scanned with OKEN Scanner

क्षेत्रीय और दूसरी अंग्रेजी भाषा में। रोमन लिपि में लिखे हुए विज्ञापन देश के विभिन्न क्षेत्रों में बड़ी आसानी से पढ़े जाते है और समझे जाते है। माना कि हिंदी का प्रयोग अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हो रहा है लेकिन वैश्वीकरण के दौर में विज्ञापन की भाषा हिंदी के लिए, कुछ बाधा अवश्य बन जाती है क्योंकि इस भाषा की अपनी कुछ सीमाएँ है। देवनागरी लिपि के क्लिष्ट ध्वनिचिह्नों को सुधारना होगा अथवा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर रोमन लिपि का प्रयोग करना होगा। संस्कृतप्रचुर, तत्समप्रधान हिंदी को त्यागकर उर्दूमिश्रित सरल, प्रवाही, रोचक, काव्यात्मक हिंदी भाषा का प्रयोग विज्ञापन के लिए करना चाहिए यही वैश्वीकरण के युग में विज्ञापन की भाषा की माँग है।

संदर्भ :

१. व्यवहारोपयोगी एवं कामकाजी हिंदी, अनंत केदारे, पृ.१२२
२. पत्रकारिता प्रशिक्षण एवं प्रेसविधि, डॉ. सुजाता वर्मा, पृ.११८
३. व्यवहारोपयोगी एवं कामकाजी हिंदी, अनंत केदारे, पृ.१२३
४. जनसंचार और विविध माध्यम, डॉ. पंभूनाथ द्विवेदी, पृ.१९५
५. व्यवहारोपयोगी एवं कामकाजी हिंदी, अनंत केदारे, पृ.१२३
६. वही, पृ.१२४
७. वही, पृ.१२५

Scanned by CamScanner

Scanned with OKEN Scanner

शिर्डी साई रूरल इंन्स्टिटयूट संचलित

कला, विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय, राहाता

(नॅक पुनर्मानांकन : बी++)

हिंदी विभाग

तथा

सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे

के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित द्वि–दिवसीय राज्यस्तरीय संगोष्ठी

जनसंचार माध्यम और हिंदी

।। प्रमाणपत्र ।।

प्रमाणित किया जाता है कि, प्रा./डॉ. सुशीला राजेंद्र खामखडे कला, वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय मानवत ने दि.१८ और १९ जनवरी २०१९ को ''जनसंचार माध्यम और हिंदी'' इस विषय पर आयोजित द्वि – दिवसीय राज्यस्तरीय संगोष्ठी में ~~सत्राध्यक्ष~~ / ~~विषय प्रवर्तक~~ / आलेख वाचक / प्रतिभागी के रूप में उपस्थित रहकर सक्रिय सहयोग प्रदान किया तथा इंटरनेट पर प्रकाशित काव्य में भावों की अभिव्यक्ति इस विषय पर शोध आलेख प्रस्तुत किया ।

Shaikh
प्रा. डॉ. ऐनूर शेख
संयोजक

Gahlankar
डॉ. बी. के. सलालंकर
प्राचार्य

Scanned with OKEN Scanner

Impact Factor – 2.143 ISSN – 2319-8648

Current Global Reviewer

Multidisciplinary International Research Journal
PEER REVIEWED & INDEXED JOURNAL

18th ,19th January 2019

जनसंचार माध्यम और हिंदी

संपादक
अरुण बी. गोदाम

सहसंपादक
डॉ. ऐनूर एस. शेख
हिंदी विभागाध्यक्षा कला, विज्ञान व वाणिज्य
महाविद्यालय, राहाता

कार्यकारी संपादक
प्रा. दादासाहेब एन. डांगे
हिंदी विभाग
हिंदी विभाग कला, विज्ञान व वाणिज्य महाविद्यालय,
राहाता

Shaury Publications

© All rights reserved with the authors & publisher Price : Rs. 400/-

Scanned with OKEN Scanner

Impact Factor – 2.143

ISSN – 2319-8648

Current Global Reviewer

Multidisciplinary International Research Journal
PEER REFREED & INDEXED JOURNAL

Title of the issue : जनसंचार माध्यम और हिंदी

© PUBLISHED BY
Shaury Publication
Khadgaon Road, Kapil Nagar, latur
Email- hitechresearch11@gmail.com www.rjournals.co.in
Contact- 8149668999

D.T.P. & PRINTING
R.R. Graphis , Latur- 413512
Email- hitechresearch11@gmail.com

EDITION :
18,19 Jan. 2019

PRICE : 400 /-

प्रस्तुत विशेषांक में प्रकाशित शोध आलेखों के विचारों से संपादक मंडल का सहमत होना जरुरी नहीं है

Scanned with OKEN Scanner

17	जनसंचार माध्यम और हिंदी का स्वरूप – प्रा. अच्युत साधु शिंदे	60
18	जनसंचार माध्यम और हिंदी – डॉ. संजय म. महेर	63
19	पत्रकारिता और हिंदी – डॉ. मिलिंद कांबळे	65
20	विविध संचार माध्यम और हिंदी– डॉ. मंगल ससाणे	68
21	संचार माध्यमों में हिंदी की भूमिका: भारतीय सिनेमा और हिंदी– डॉ. प्रविण तुळशीराम तुपे	71
22	इंटरनेट पर प्रकाशित काव्य में भावों की अभिव्यक्ति – डॉ. सुजाता राजेंद्र लामखडे	74
23	इंटरनेट और हिंदी– डॉ.एन. डी.शेख	77
24	पत्रकारिता और हिंदी– डॉ. बेबी कोलते	79
25	दूरदर्शन और हिंदी – डॉ. दिपाश्री कैलास गडाख	82
26	जनसंचार माध्यम और हिंदी – डॉ. प्रतिभा आनंदराव जावळे	84
27	इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यम और हिंदी – प्रा. रागिनी पुरूषोत्तम टेकाळे	86
28	हिंदी विज्ञापन के प्रयोजन एवं विशेषताएँ – डॉ.राजाराम दादा कानडे	89
29	इलेक्ट्रॉनिक माध्यम और हिंदी सिनेमा – डॉ. एस. बी. कोलते	93
30	हिंदी सिनेमा और हिंदी – श्रीमती जयश्री अर्जुन माथेसुळ	96
31	संचार माध्यम और जन–जीवन के सरोकार – प्रा.जी. पी. काथेपुरे	100
32	हिंदी सिनेमा में हिंदी का अस्तित्व – डॉ. श्वेता चौधारे	104
33	हिंदी सिनेमा और हिंदी – प्रा. संदिप दामू तपासे	107
34	हिंदी सिनेमा और साहित्य – प्रा. शरद कचेश्वर शिरोळे	110

Scanned with OKEN Scanner

अनुक्रमणिका

अ.नं.	आलेख शीर्षक एवं लेखक	पृष्ठ
1	जनसंचार माध्यम और हिंदी– डॉ. शहाबुद्दीन नियाज मुहम्मद शेख	9
2	सेंसर बोर्ड प्रणाली– डॉ. ईश्वर पवार	12
3	सूचना प्रौद्योगिकी और हिंदी– डॉ. हनुमंत जगताप	15
4	हिंदी की वर्तमान साहित्यिक पत्रिकाओं का योगदान– डॉ. रेखी अमरजा अजीज	18
5	गांधी के जनसम्पर्क की भाषा – हिंदी – डॉ. जवाहर कर्नावट	21
6	जो बात हिंदी में है: विज्ञापनों में हिंदी की ताकत– डॉ. गोविंद बुरसे	24
7	सोशल मीडिया और वर्तमान समाज– डॉ. समीर गुलाब सय्यद	29
8	इंटरनेट और हिंदी – डॉ. अशोक द्रोपद गायकवाड	32
9	इलेक्ट्रॉनिक जनसंचार माध्यमो में हिंदी का प्रयोग – डॉ. दत्तात्रय टिळेकर	36
10	विज्ञापन और हिंदी – डॉ. अनंत केदारे	40
11	जनसंचार माध्यमों में हिंदी की भूमिका – डॉ. ऐनूर एस. शेख	46
12	जनरांचार माध्यम और हिंदी – डॉ. भरत शेणकर	48
13	इंटरनेट और हिन्दी – डॉ. अनिता वेताळ /अंत्रे	51
14	जनसंचार माध्यमों की भाषा :हिंदी – प्रा. डी. एन. डांगे	53
15	अंतर्जालीय हिंदी ई–पत्रिका 'गर्भनाल' : सोच और अभिव्यक्ति – डॉ. भाऊसाहेब नवले	55
16	दूरदर्शन और हिंदी – डॉ. शशी साळुंखे	58

Scanned with OKEN Scanner

Current Global Reviewer Peer Reviewed Journal | ISSN- 2319-8648
Impact Factor - (IIJIF) – 2.143, जनसंचार माध्यम और हिंदी | January 2019 | Peer Reviewed Journal

हिंदी के प्रचार प्रसार में इंटरनेट की भूमिका

डॉ.सुजाता राजेंद्र लामखडे
कला,वाणिज्य,विज्ञान महाविद्यालय, सात्रळ(हिंदी विभाग)

हिन्दी का प्रवासी साहित्य बडा व्यापक है। आज अनेक भारतीय विश्व के कई देशों में फैले है। जनसंचार माध्यमोंके द्वारा उनके अपने साहित्य के माध्यम से अपने देश की मिट्टी के प्रति प्रेम, संवेदनाये प्रदर्शित होती है। दूर देश में जा बसे भारतीयों के साहित्य में हिन्दूस्तान का वह चित्र उभरकर सामने आता है जो हमारे मन को उन सारी बातों में सराबोर कर देता है। हिन्दूस्तान के प्रति सुधाजी का रुहानी लगाव पाठकोंसे बद्ध कर देता है। भारतीय जन–जीवन, उसकी मान्यतायें, परंपराये, रीति पद्धतियॉ, पौराणिक आख्यायिकायें सदियों से जड पकडे हुए विश्वास इन सारी बातों का ताना बाना सुधाजी की कविताओं में हल्के से गुँथा गया है।

विदेश की संपन्नता, समृद्धता, वैविध्य मे जा बसी कवयित्री को भारतभूमि पूकारती है। संवेदनाओं का, स्मृतिका बॉध टूटकर शब्दो में परिवर्तित हो बहने लगते है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में साहित्य लेखन अपनी गतीसे गतीमान है। श्रोताओं, पाठकों तक कम से कम समय में पहुँचने के कारण आपसी संवाद, वैचारिक आदान –प्रदान, इ.अनेक बातों से हम रुबरु हो जाते है। साहित्य का यह रुप उत्साहजनक एवं वैशिष्टयपूर्ण है। जनसामान्य का चिंतन अनेक प्रश्नों को समस्याओं को उकेरता है उसके उत्तर भी खोज निकालता है। जनसंचार माध्यम द्वारा डॉ.सुधा ओम धिंग्रा जैसी हिंदुस्तानी पंजाबी कवयित्री दूर देश से अपनी भारतीयता की पहचान बना हमसे बडे विश्वास, अपनेपन, प्रेम, सहानुभुती से मन की बाते करती है।

विभिन्न भाव भंगीमाओं को अपनी कविता में व्यक्त करती सुधाजी की काव्यशैली बडी ही अनुठी है। स्त्री जाती की वेदना जब शब्द बन उछलती है तब पाठक यह महसूस करता है कि प्राचीन समय से वर्तमान तक स्त्री हर जगह एक सूत्र में सभी को पिरोये रखना चाहती है। नारी की वेदना तब भी अलक्षित थी, आज भी दुर्लक्षित है। बचपन, यौवन, मातृत्व इन सभी अवस्थाओं मे वे जीवन का हर पल कभी आनंद, कभी विषाद से निबाहती है। इन सभी पलों से गुजरते हुए सुधाजी के अंदर बसी स्त्री का वैचारिक मंथन जारी है। अमरिका जैसे संपन्न देश मे रहकर भी अपने वतन की मिट्टी की सोंधी खुशबू से महकती भावभीनी कवितायें निरंतर लिखनेवाली सुधाजी इस माध्यम से बडी ही मार्मिक अभिव्यक्ति देती है।

बाल्य काल की मोहक स्मृतियो में रममाण वे लिखती है –

'तारों भरे आकाश में बचपन का ध्रुवतारा ढूँढना आज भी याद है।
तारो में अपने बुजुर्गो को ढूँढना अच्छा लगता है।'

वर्तमान जीवन प्रवाह में कितने सारे स्थित्यंतर आए, कितने सारे प्रवाह रुख बदलते रहे वैचारिक परिवर्तन, कितने सारे उत्थान –पतन देखे गये। अपने व्यक्तिगत जीवन में भी अनेक घात–प्रतिघातों को सहते हुए, परदेशी जीवन व्यतीत करते हुए कवयित्री का मन अपने देश की आबोहवा में ही घुला रहा। वे यादें उन्हें बार–बार सताती है। बौद्धिक विकास तथा औद्योगिकरण के इस दौर में, अति भौतिकवादीता की बाढ में बचपन की सारी खुशियॉ ढह गयी। 'अच्छा लगता है' कविता में वो लिखती है –

'वो मासुमियत, वो भोलापन

Scanned with OKEN Scanner

फिर से ओढ लेने को जी चाहता है'। इस व्यापारियों की दुनिया में सब कुछ कितना पराया है। अपने स्त्रीत्व की पहचान, उसकी गरिमा तलाशती हुयी कवयित्री का स्त्रीत्व अंदर ही अंदर कसमसाता है।

'असमानता क्यो' में वह लिखती है

'तपती दुपहरी सा तुम बने रहे
बदली बन बौछारे मैं देती रही
सूरज सा तुम जलते रहे
चाँदनी बन ठंडक में देती रही' – भारतीय संस्कृति, संस्कारों में पली–बढ़ी कवयित्री के त्याग तथा संयमी जीवनानुभव हमारे समक्ष स्पष्ट हो जाते है। किसी तप्त अग्निकुंड की भाँती सहते जाना यह मानो नियती है। जीवन यज्ञ के संकटो में बदली बन त्याग, शांती की ठंडी बौछारों ये यह अपने सहचर को स्नेह देती मानो कोई दीपशिखा एवं तरुछाया के समान नजर आती है। दूसरों के जीवनाकाश की सौंदर्यवर्धीनी चाँदनी बन जाना यह समस्त नारी वर्ग के मन की संयत भावावस्था स्पष्ट कर देता है। समय के अंधड में, जीवन के कठोर धरातलचर हर बार रवह पुरुषप्रधान संस्कृतिमें झाँसी बन पुरुष की ढाल बनी रही।

प्रस्तुत कविताओं में पौराणिक गौरवगाथाओं में से सीतामाता के उदात्त जीवन के प्रति अनंत श्रध्दा एवं आस्था का, सहानुभूती का भाव दिखाई देता है। अयोध्या की राजराणी सीतामाई से ऐसा नेह मानो कवयित्री को हुआ है कि उनकी वेदना वे समस्त नारी जाती की वेदना में देखती है–

'राम बने तुम अग्निपरीक्षा होते रहे
भावनाओं के जंगलमें बनवास मैं काटती रही'

इन अत्यंत भावुक कर देने वाली पंक्तियों में जानकी एवं वैदेही की वेदना मानो समस्त नारी वर्ग की वेदना बन जाती है जिसने उम्र भर उस तपिश को सहा। कवयित्री इसी वेदना से रुबरु हो मार्मिक प्रश्न यह पूछती है –

'देवी बना मुझे पुरुषत्व तुम दिखाते रहे
सती हो सतीत्व की रक्षा मैं करती रही
स्त्री–पुरुष दोनो से सृष्टि की संरचना है
फिर यह असमानता क्यो?

भारतीय संस्कारों, संस्कृति में पत्नी – बढी सुधाजी अपने सारे रिश्तों की मिठास, परिवारिक जीवन के विश्वास, प्रेम, त्याग आदि बातों को निबाहे चलना चाहती है, जहाँ भी नारी विमर्श की बात आती है पाठकहृदय अस्वस्थ हो जाता है।

स्त्री भ्रुणहत्या जैसी गंभीर समस्या पर भी उनकी कविता का गर्भस्थ शिशू करुण, मर्मभेदी सेदन कर कहता है–

'प्यार की जगह तिरस्कार क्यो।
कही ऐसा न हो हवस का कलंक बन
आँचल से तेरे चिपक जाँउ, उठा सको न सिर
फिर समाज में तुम कभी'

समाज में फैले आतंक से वे बडी अस्वस्थ है। उनकी ढीठ रुह अपने देश के नेताओं सें प्रश्न करती है पर हर बार वे सारे प्रश्न नेताओं के सामने परोसे मुर्गो के नीचे दब जाते है, शराब के प्यालो में बह जाते है। इसी बात का अफसोस है। भारतीय समाज जीवन के स्थैर्य की कामना वह करती है। सामाजिक स्वास्थ्य एवं शाती बनी रहे यही उन्हें अभीप्रेत है।

माँ की ममतामयी महिमा की अर्थपूर्ण अभिव्यक्ती में वे लिखती है –

'माँ बनने के बाद माँ की महीमा और भी बढ जाती है'– स्पष्ट है कि बचपन की मासुमियत, प्रेम की तपिश,स्त्री मन की कसमसाहट, मातृत्व की गरिमा, भारतीयत्व का गर्व,मनुष्य होने की जिम्मेदारीयों

Scanned with OKEN Scanner

का एहसास, ईन्सानियत में आस्था तथा आग्रह यह सारी सारी बातें जहॉ–तहॉ कविताओं के रेशे–रेशें में दिखायी देती है। बचपन की बारीश और वे तमाम यादें आज भी मानो उनके अंतर्मन को भीगो देती है। अपने घरौंदे के प्रति नेह–छोह, जींदगी की आपाधापी में पाया हुआ अधुरापन, अकेलापन, एक अमिट प्यास, घुटन,उदासी की पर्ते खोलते वह लिखती है–

'उदास समुंदर के किनारे
सूनी ऑखो से
हमें तो अधुरा सा घरौंदा
अपना याद आया।'

मन मे झुलती, लहराती, सुलगती यादों में आशा निराशाओं के गर्त में सुधाजी की कवितायें पाठक पर मोहीनी डाल देती है।

दहेज के कारण नारी को वर्षो से दुख में, निराशा मे झुलसना पडा इसे आत्मेवेदना जान वह लिखती है –

'जिसकी बारात दहेज के अभाव में
बेरंग लौट जाती है
पीडा का अनुभव जानना है तो जाओ
लाल जोडे में सिसकती उस अनब्याही
के ऑसूओं में झॉको।'

भारतीय समाज में युगों से चली आ रही मान्यतायें, कुप्रथाये किसी न किसी रुप में नारी को प्रताडित, अवहेलित करती रही।आधुनिक एवं अतिभौतिक वादिता के कारण समुचे समाज मे जो अमुलाग्र परिवर्तन नजर आता है उसका दर्दनाक एहसास मानो उन्हें तीव्र वेदना से भर देता है जीवन की नीरसता, नकलीपन, उद्विग्नता पाठकोंको भी अस्वस्थ कीए बगैर नहीं रहती जब वे लिखती है–

'कॉच की घास, निहार तो सकती हूँ
पॉव नहीं रख सकती ।'

आज आधुनिक जीवन प्रवाह में आदमी को सब कुछ मिल गया, पर न जाने वह मासुमियत, आत्मियता कहॉ खो गयी जिसकी आदमी को ताहश्र तलाश है। जीवन की आपाधापी में हम कहॉ से कहॉ आ गये इसी वास्तविकता का भान प्रस्तुत कविताओं में है।

संदर्भ–

१. जनसंचार और पत्रकारिता, विविध आयाम– डॉ.ओमप्रकाश शर्मा
२. डॉ.सुधा ओम धिंग्रा –काव्य
३. शोध दिशा

Scanned with OKEN Scanner

तुलनात्मक अध्ययन की रूपरेखा

डॉ. अनंत केदारे
हिंदी विभाग , कला, वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय,
साकुरा ता. राहुरी जि. अहमदनगर 413711

शोध विषय, उद्देश्य, परिसीमा आदि रूपरेखा के महत्वपूर्ण अंग हैं । उसकी व्यावहारिक कार्यविधि में पद्धतियाँ, भाषा, शैली, लेखन लिपि, टंकन या मुद्रण आदि का समावेश होता है । शोधार्थी को शोध विषय और उसकी व्यावहारिक कार्यविधि दोनों पक्षों का भलीभाँति ज्ञान होना आवश्यक है तभी शोध कार्य स्तरीय होगा । शोध विषय निश्चित करने के पश्चात उसकी रूपरेखा निर्धारित करना आवश्यक है । रूपरेखा को नक्शा या ढाँचा कहा जाता है । इसे 'चैप्टर स्कीम' या 'ब्लू प्रिंट' कहा जा सकता है । जो शोध विषय की 'आऊटलाइन' होती है । उसके अनुसार ही शोध कार्य अनुगमन करता है । इसमें अध्याय विभाजन के साथ अन्य बिंदु जैसे विषय, विषय प्रवेश, पूर्ववर्ती शोध कार्य, उद्देश्य, संदर्भ सूची आदि महत्वपूर्ण होते हैं। साधारण और तुलनात्मक शोध की रूपरेखा में अंतर है।

तुलनात्मक अध्ययन की रूपरेखा :

रूपरेखा निर्धारित करते समय अध्याय विभाजन पर तर्कपूर्ण और मनोवैज्ञानिक ढंग से विचार किया जाना चाहिए। अध्याय के अंतर्गत आनेवाले उपमुद्दों का भी समावेश उसमें होना चाहिए। शोध प्रक्रिया में रूपरेखा का अनन्यसाधारण महत्व है। "रूपरेखा के अभाव में शोधार्थी न तो व्यवस्थित ढंग से सामग्री संकलित कर सकता है और न ही संकलित सामग्री की तथ्यात्मकता के प्रति आश्वस्त हो सकता है।"[1] रूपरेखा के अभाव में शोध कार्य भटकने की संभावना होती है । सामान्य शोध और तुलनात्मक शोध में रूपरेखा का अनन्यसाधारण महत्व है। "रूपरेखा शोध विषय का ताना-बाना होती है । उसमें विषय की सभी सीमाएँ और संभावनाएँ एक अन्वितिमूलक वैचारिकता में बंधकर सिमट जाती हैं। विषय के सभी विचारसूत्र एक क्रमबद्ध रूप में विकसित होते दिखाई पडते हैं।"[2] विषय का विस्तार रूपरेखा पर ही निर्भर होता है। रूपरेखा के आधार पर प्रबंध विस्तार पाता है।

जिन तत्वों की स्थापना करनी है उनका उल्लेख रूपरेखा में आना आवश्यक है। भले ही यह रूपरेखा प्रारंभिक या कामचलाऊ क्यों न हो परंतु उसमें सभी तत्वों का समावेश होना आवश्यक है । "स्थूल तथ्यों की सूक्ष्म तात्विक विवेचना शोध प्रबंध का प्राण है और रूपरेखा स्थूल तथ्यों की इस सूक्ष्म तात्विक विवेचन योजना की नींव होती है ।"[3] विषय, विषय क्षेत्र, शोध दृष्टि, शोध स्तर की स्थापना, निष्कर्षों की तात्विक अंतर्संगति, शोधार्थी, शोध निर्देशक तथा उपलब्ध सामग्री रूपरेखा के निर्धारक बिंदु हैं। दूसरे शब्दों में निर्धारित तत्वों के अभाव में रूपरेखा नहीं बन सकती । "ज्यों-ज्यों अध्ययन होता रहेगा त्यों-त्यों ज्ञात होगा कि कुछ नए शीर्षक जोड़े जा सकते हैं और

Scanned by CamScanner

अप्रासंगिक होने से अथवा सामग्री के न मिलने के कारण कुछ शीर्षक छोड़ने पड़ते हैं । संपूर्ण शोध काल में - लगभग प्रबंध को अंतिम रूप देने तक ऐसे परिवर्तन होते रहेंगे ।"[4] जो शीर्षक बाद में काम आ सकते हैं उन्हें रूपरेखा में शामिल कर लेना चाहिए। बस उनके आगे प्रश्नचिह्न लगा देना चाहिए। बाद में उन्हें छोड़ा जा सकता है। इस प्रारंभिक रूपरेखा के अनुसार सामग्री संकलिन की जाती है ।

तुलनात्मक रूपरेखा के बिंदु :

रूपरेखा तीन बिंदुओं में विभाजित होती है. । विषय प्रवेश, मुख्य विषय और परिशिष्ट ।

1. विषय प्रवेश :

विषय प्रवेश में प्रस्तावना ,शोध विषय का महत्व, पूर्ववर्ती संपन्न शोध कार्य और उनकी उपलब्धियाँ तथा ज्ञान विस्तार में प्रस्तावित योगदान का ब्यौरा देना चाहिए ।

2. मुख्य विषय :

मुख्य विषय में अध्याय वर्गीकरण दिया जाता है। अध्याय एवं उपअध्यायों का औचित्यपूर्ण और सटिक होना आवश्यक है । शोध विषय के अनुरूप अध्याय विभाजन होना चाहिए। शोध चेतना को जागृत करनेवाले अध्याय एवं उपअध्याय होने चाहिए। परियोजना प्रस्तुत करते समय वैज्ञानिकता का परिवहन करना चाहिए तभी रूपरेखा सुगठित होगी । अध्याय विभाजन एवं वर्गीकरण स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर होना चाहिए। यह प्रारंभिक रूपरेखा होती है । उसमें समय-समय पर और प्रत्यक्ष काम करते समय परिवर्तन होते ही रहते हैं परंतु फिर भी रूपरेखा जितनी ठोस और सटिक होगी उतनी ही शोध कार्य की पकड़ मजबूत होगी ।

3. परिशिष्ट :

परिशिष्ट रूपरेखा का तीसरा महत्वपूर्ण अंग है । शोधार्थी परिशिष्ट को महत्व देते नहीं पाए जाते परंतु परिशिष्ट रूपरेखा का अभिन्न अंग है । परिशिष्ट आधार ग्रंथ तथा संदर्भ ग्रंथ सूची स्वतंत्र देनी चाहिए। पहले आधार ग्रंथ उसमें भी हिंदी, मराठी, अंग्रेजी अकारादि क्रम में दिए जाते हैं फिर उसी प्रकार सहायक ग्रंथ सूची अकारादि क्रम में देनी चाहिए। पत्र-पत्रिकाओं तथा कोशों की सूची भी देनी चाहिए।

एक अच्छी रूपरेखा की नींव, विषय क्षेत्र, शोध दृष्टि, शोध स्तर तथा उपलब्ध सामग्री आदि बिंदुओं पर करती है । शीर्षक संक्षिप्त और स्पष्ट होना चाहिए। इसमें एक भी अनावश्यक नहीं होना चाहिए। कभी-कभी 'एवं' और 'तथा' शब्दों का प्रयोग और के स्थान पर किया जाता है । और शब्द जो अर्थ देता है वह 'तथा' और 'एवं' शब्द नहीं देते । इससे बचना चाहिए। "रूपरेखा तैयार करते समय शोधार्थी को सर्वप्रथम अपने विषय शीर्षक के प्रत्येक शब्द के औचित्य, अर्थ और अर्थविस्तार तथा शब्दों के पारस्परिक संबंध और उस संबंध के आधार पर विषय की मूल्य चेतना को समझ लेना अनिवार्य है।"[5] उदाहरणस्वरूप 'रामचरितमानस और कामायनी की तुलना' अथवा 'प्रसाद और कालिदास के काव्य में प्रकृति चित्रण' तथा 'धूमिल और नामदेव ढसाल के काव्य का तुलनात्मक अध्ययन' ये शीर्षक संक्षिप्त और सुस्पष्ट है। अध्याय एवं उपअध्यायों के शीर्षक भी संक्षिप्त और स्पष्ट होने चाहिए। शोध विषय निश्चित करने के बाद शोध निर्देशक से परामर्श करना

Scanned by CamScanner

चाहिए और दिए गए सुझावों के अनुरूप रूपरेखा तैयार करनी चाहिए । तीसरी महत्वपूर्ण बात शोधार्थी को अपने विषय के अनुरूप परिशिष्ट में उपलब्ध ग्रंथ सूची देनी चाहिए। कच्ची रूपरेखा में निर्देशक द्वारा दिए गए सुझावों के अनुसार बारीकी से परिवर्तन करना आवश्यक है ।

शोध कार्य किस क्षेत्र में किया जानेवाला है इसका स्पष्ट संकेत रूपरेखा में दिया जाना चाहिए। किस दिशा में (भाषाविज्ञान, लोकसाहित्य, साहित्य आदि) किस विधा में (कविता, नाटक, कथासाहित्य आदि) कौन-से काल पर (प्राचीन, मध्ययुगीन, आधुनिक आदि) तथा किस प्रकार में (दलित साहित्य, स्त्री विमर्श, आदिवासी विमर्श आदि) के स्पष्ट संकेत रूपरेखा में दिए जाने चाहिए।

रूपरेखा तैयार करते समय इस बात का भी संकेत दिया जाना आवश्यक है कि शोध कार्य किस दृष्टि से किया जानेवाला है । तुलनात्मक शोध में तुलनात्मकता अपने आप में एक स्वतंत्र दृष्टि है । दार्शनिक, मार्क्सवादी, गांधीवादी, यथार्थवादी आदि कई दृष्टियों से शोध संपन्न किया जाता है । इसकी दिशा दृष्टि निश्चित होनी चाहिए । अतः इसके संकेत रूपरेखा में दिए जाने चाहिए।

रूपरेखा तैयार करने का मुख्य लाभ सामग्री संकलित करने के लिए होता है। रूपरेखा के बिना शोध कार्य आगे ही नहीं बढ़ेगा । अतः शोधार्थी को इसी क्रम में सामग्री संकलित करनी चाहिए और रूपरेखा बनाते समय इस ओर अधिक ध्यान देना चाहिए। शोध के लिए आवश्यक सामग्री को चार प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है । 1. मूल सामग्री या आधार ग्रंथ 2. शोधात्मक या समीक्षात्मक ग्रंथ 3. पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित लेख 4. शोध की वैज्ञानिक कार्यविधि ग्रंथ

भारत में सभी विश्वविद्यालयों में शोध विषय एवं रूपरेखा मान्यता के लिए शोध समिति के पास भेजी जाती है फिर समिति इसपर अपना निर्णय देती है और शोध विषय को स्वीकृति दी जाती है । अक्सर देखा जाता है कि शीर्षक ठीक न होने के कारण शोध विषय को अस्वीकार किया जाता है लेकिन इसकी संभावना अत्यल्प होती है । शोध विषय के शीर्षक में परिवर्तन सुझाया जाता है । उप-अध्यायों में भी परिवर्तन सुझाए जाते हैं और शोधार्थी को परिवर्तनों के साथ रूपरेखा पुनः प्रस्तुत करने का परामर्श दिया जाता है। इसमें महीनों बीतने की संभावना होती है। इससे बचने के लिए शोधार्थी और निर्देशक को रूपरेखा सचेततापूर्वक तैयार करनी चाहिए। यदि आवश्यकता हो तो किसी अन्य तज्ञ व्यक्ति से परामर्श लिया जा सकता है । जहाँ तक हो सके इस कच्ची रूपरेखा को ठीक बनाकर ही प्रस्तुत करना चाहिए।

संदर्भ :

1. एस. एन. गणेशन, अनुसंधान प्रविधि सिद्धांत और प्रक्रिया, पृ. 93
2. बैजनाथ सिंहल, शोध-स्वरूप एवं मानक व्यावहारिक कार्यविधि, पृ. 74
3. वही, पृ. 76
4. वही, पृ. 76
5. वही, पृ. 78

• • • •

Scanned by CamScanner

EFFECT OF EARTHWORMS (*EUDRILUS EUGENAE*) ON DECOMPOSING VERMICAST AND CONVERSION OF GOAT &SHEEP MANURE

R. S. Tambe

Department of Zoology, Arts, Commerce and Science College, Satral,Tq: Rahuri, Dist: Ahmednagar (MS), India-413711

Abstract

Vermiculture, we get well decomposed vermicasts, which can be used as manure for crops, vegetables, flowers, gardens, etc. In the process, earthworms also get multiplied and the excess worms can be converted into vermiprotein which can be utilised as feed for poultry, fish, etcEpigeic earthworms such as Eudriluseugenia, Eiseniafoetida,Vermi-wash can also be used as spray on crops. Thus various economic uses can be obtained from organic wastes and garbage and prevent pollution. It has been estimated that organic resources available in the country alone can produce not less than 20 million tonnes of plant nutrients (NPK). The growth and mortality of an epigeic earthworm Eudriluseugenae was studied under laboratory conditions from two wastes, i e. goat and sheep. Five hatchlings per 100 g of waste were used to study mortality and growth rate. No mortality was observed in any waste. The earthworms grow rapidly in goat and then sheep waste. The growth observed during present study exhibited in the order goat> Sheep in Eudriluseugenae.

Keywords:-Vermicast, Decomposing, Eudriluseugenia, Vermiwash.

Introduction: The conversion of organic waste into useful products is essential in the recycling of organic matter to sustain soil fertility and avoid environmental pollution. Vermicompost technology has promising potential to meet the organic manure requirement in both irrigated and rainfed areas. It has tremendous prospects in converting agro-wastes and city garbage into valuable agricultural input. When organic manures are used, the chemical nutrients are also utilised well by crops as they improve soil health and balance the negative effects of chemicals.Utilization of the finished product can help in improving soil biological, physical and chemical properties and therefore improve the soil environmental quality. Vermi-composting involved feeding of the epigeicearthworms with organic waste for the production of vermicast. Epigeic earthworms such as *Eudrilus Eugenia, Eiseniafoetida, Eiseniaandrei,* and*Perionyxexcavatus*have been used to convert organic waste into vermicast. Experimental evidence on vermi-composting using animal dung such as goat and sheep solids (Edwards *et al.* 1998), Waste Conversion to Vermicast by *Eudriluseugenae*, goat and sheepmanure as substrates showed efficient conversion of the waste into vermicast. A wide range of the organic waste such as crop residue, textile mill sludge, agriculture, urban and industrial waste, vegetable waste, kitchen waste and guar gum waste have been shown to be suitable substrates for vermin-composting.

Materials and methods: Young clitellated specimens of *Eudriluseugenae*, weighing 150–250 mg live weight were randomly picked from several stock cultures containing 500–1500 earthworms in each, maintained in the laboratory with waste goat and sheep manure as culturing material. were collected from different animal farms of Rahuritaluka. The dung consisted of a mixture of faeces and urine without any bedding material. The main characteristics of animal wastes are given in *Table 1*. All the samples were used on dry weight basis for biological studies and chemical analysis that was obtained by oven drying the known quantities of material at 110 °C. All the samples were analyzed in triplicate and results were averaged. two circular 02 plastic containers (diameter 14 cm, depth 12 cm) were filled with 100 g (DW) of each dung material. The moisture content of wastes was adjusted to 70– 80% during the study period by spraying adequate quantities of water. Thewastes were turned over manually everyday for 15 days in order to eliminate volatiletoxic gases. After 15 days, 5 clitellated hatchlings, each weighing 150–250 mg (liveweight), were introduced in each container. Three replicates for each waste weremaintained. containers were kept in dark at temperature 25±1 °C.Biomass gain, clitellum development and cocoon production were recorded weeklyfor 15 weeks.

Scanned with CamScanner

Scanned with OKEN Scanner

The feed in the container was turned out, and earthworms and cocoonswere separated from the feed by hand sorting, after which they were counted, examinedfor clitellum development and weighed after washing with water and drying them bypaper towels. The worms were weighed without avoiding their gut content. Correctionsfor gut content were not applied to any data in this study. Then all earthworms and feed(but no cocoons) were returned to the respective container. No additional feed wasadded at any stage during the study period. All experiments were carried out in twice and results were averaged.The pH and electrical conductivity (EC) were determined using a water suspension of each waste in the ratio of 1:10 (w/v) that had been agitatedmechanically for 30 min and filtered through Whatman No. 1 filter paper. Total organiccarbon (TOC) was measured using the method of Nelson &Sommers.

Table 1. Initial physico-chemical characteristics of various animal wastes.

Animalwaste	Moisturecontent (%)	pH(1 : 10)	EC(dS/m)	C : Nratio	TK(%)	TAP(%)
Goat	22.8±1.38	7.5±0.62	2.57±0.41	89.4±3.00	0.75±0.28	0.40±0.03
Sheep	77.4±4.45	8.4±1.09	0.89±0.14	91.2±2.29	0.70±0.18	0.29±0.06

Total available phosphorus (TAP) was analyzed using the colorimetric method with molybdenum in sulphuric acid. Total K (TK) was determined after digesting the sample in diacid mixture (cc HNO3 : cc HClO4 = 4 : 1, v/v), by flame photometer (Elico, CL 22 D, Hyderabad, India) .

Results and discussion

Physico- chemical characteristics of the animal wastes: The initial physico-chemical characteristics of animal wastes before use are summarized in table 1. The different physico-chemical parameters showed the range 21%-73% for moisture, 7.6- 8.4 for pH, 0.90-3.91 for Electrical conductivity, 0.89 dS/m -0.97 dS/m for C:N ratio, 0.70 %-1.31 % for TK and 0.31 %-0.50 % for TAP.

Growth of Eudriluseugenae in various animal wastes: No mortality was observed in any animal waste during the study period. Gunadi and Edwards reported the death of *Eudriluseugenae* after 2 weeks in the fresh cattle solids although all other growth parameters such as moisture content, pH, electrical conductivity, C:N ratio, NH4+ and NO3- contents were suitable for the growth of the earthworms. They attributed the deaths of earthworms to the anaerobic conditions which developed after 2 weeks in fresh cattle solids. In our experiments, all the wastes were pre-composted for 2 weeks and during this period all the toxic gases produced might have been eliminated. It is established that pre-composting is very essential to avoid the mortality of worms. The growth rate of *Eudriluseugenae* in studied animal wastes over the observation period are given in table 2. Maximum worm biomass was attained in sheep waste (1294±245mg/earthworm) and minimum in goat waste (904±174mg/earthworm).

Table 2: Growth of Eudriluseugenae in different animal wastes

Animalwaste	Mean initial weight/earthworm(mg)	Maximum Weightachieved /worm (mg)	Maximum weight achieved on	Net weight gain / worm(mg)	Growth rate/Worm/day(mg)	Wormweight gained per unit dry animal waste(mg/g)
Sheep	192±67	1294±245	6th week	1102±197	26.2±4.70	65.3±1.0
Goat	210±29	904±174	6th week	694±148	16.5±3.54	38.5±1.9

Scanned with CamScanner

Scanned with OKEN Scanner

The maximum weight by earthworms was attained in the 6th week in sheep, goat wastes. When *Eudriluseugenae* received food below a maintenance level, it lost weight at a rate which depended upon the quantity and nature of its ingestible substrates. The biomass gain for *Eudriluseugenae* per g dry weight of feed (DW) was highest in sheep Waste (65.3±1.0 mg/g) and smallest in goat waste (38.5±1.9 mg/g). This difference could be due to the difference in species morphology and initial characteristics of the feed waste. Nauhauser*et al.* reported that rate of biomass gain by *Eudriluseugenae* was dependent on population density and food type. Net biomass gain/earthworm per unit feed material in different feeds followed the order: sheep >goat Net biomass gain by earthworms in sheep waste was 1.92 times higher than in goat waste (*Table 2*). The growth rate (mg weight gained/day/earthworm) has been considered a good comparative index to compare the growth of earthworms in different wastes.

Conclusions: Disposal of animal dung materials is a serious problem. Currently the fertilizer values of animal dung are not being fully utilized in India resulting in loss of potential nutrients. Our trials demonstrated vermicomposting as an alternate technology for the recycling of different animal dung materials using an epigeic earthworm *Eudriluseugenae* under laboratory conditions. The dung materials strongly influenced the biology of *Eudriluseugenae*The growth observed during present study exhibited in the order Goat> Sheep in *Eudriluseugenae.* Finally sheep and goat wastes supported the growth and reproduction of *Eudriluseugenae*,hence it can be used as feed materials in large scale vermicomposting facilities. Further studies are required to explore the potential of utilization of wastes in mixture with sheep or goat wastes.

REFERENCES

Giraddi, R. S., 2000, Influence of vermicomposting methods and season on the biodegradation of organic wastes, Indian J. Agric. Sci., 70 : 663-666.

Vermi Co. 2001. Vermicomposting technology for waste management and agriculture: an executive summary.(http://www.vermico.com/summary.htm) PO Box 2334, Grants Pass, OR97528, USA: Vermi Co.

Bansal S and Kapoor K K. (2003).Vermicomposting of crop residues and cattle dung with Eisenlafoetida.Biores. Technol. 73: 95–98.

Ismail S A. (2005). The earthworm book.Goa: Other India Press, 101.

Garg V K, Kaushik P and Dilbaghi N. (2006a).Vermiconversion of waste water sludge from textile mill mixed with anaerobically digested biogas plant slurry employing Eisenlafoetida. Ecotoxicology and Environmental Safety 65: 412–419.

Scanned with CamScanner

Scanned with OKEN Scanner

SHRI VITTHAL SHIKSHAN PRASARAK MANDAL, NIMGAON (TE)

VITTHALRAO SHINDE ARTS COLLEGE, TEMBHURNI

TAL. MADHA, DIST. SOLAPUR

IQAC & DEPT. OF HISTORY

&

SOLAPUR UNIVERSITY, SOLAPUR

JOINTLY ORGANIZED

ONE DAY NATIONAL CONFERENCE

CERTIFICATE

THIS IS TO CERTIFY THAT PROF. / DR. /MR. /MS. Latika Hiralal Pandure OF Art, Comm. & Sci. Mahavidyalaya, Satral HAS PARTICIPATED AS A RESOURCE PERSON / DELEGATE / CHAIRPERSON / MEMBER OF ORGANIZING COMMITTEE IN THE ONE DAY NATIONAL CONFERENCE ON 'HISTORIOGRAPHY AND TRENDS IN HISTORY'. HE / SHE PRESENTED A RESEARCH PAPER ENTITLED सह्याद्रीतील इतिहासलेखन प्रवाह ON 08 FEBRUARY, 2019.

CONVENOR	CO-CONVENOR	IQAC CO-ORDINATOR	PRINCIPAL
DR.RAJENDRA GAIKWAD	PROF. DIGAMBAR WAGHMARE	DR. NETAJI KOKATE	DR.MAHENDRA KADAM

REVIEW OF RESEARCH

UGC APPROVED

International Online Multidisciplinary Journal

ISSN 2249-894X Impact Factor 5.7631 (UIF)

Historiography and Trends in History

Special Issue

February, 2019

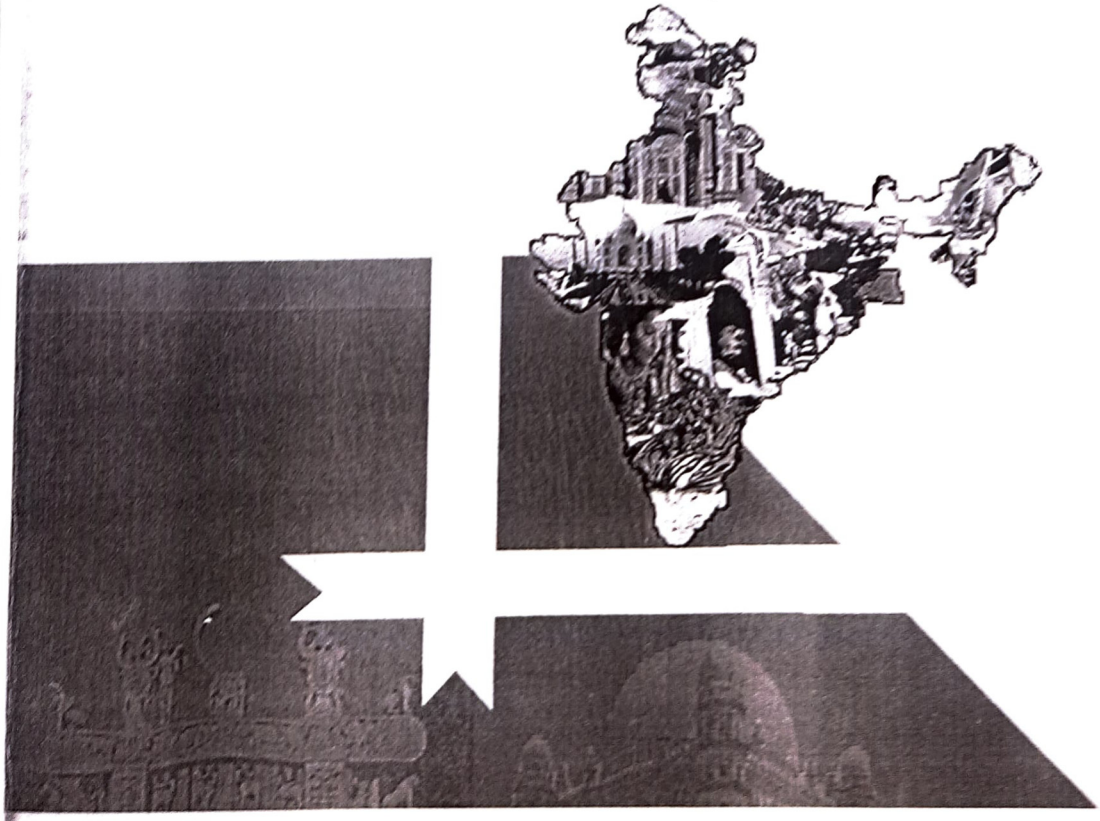

15	बौध्द धर्माची मानवतेची शिकवण श्री. पाटील एच. पी.	56
16	Archaeological And Cultural Heritage Of Haryana Dr. Sunil Kumar	59
17	बौध्द धम्मातील सण उत्सव- संक्षिप्त ओळख प्रा. डॉ. संतोष कांबळे	61
18	शोधकार्य प्रणाली एक दृष्टि प्रा. अनिल मनोहर जाधव	63
19	सबाल्टर्न इतिहासलेखन प्रवाह प्रा. लतिका हिरालाल पंडुरे	66
20	Non-Cooperation Movement In Indian Freedom Struggle Dr. Anil Khatal Jambhale And Dr. Padmshrikallappa Waghmare	70
21	आरोग्य आणि मानसिक ताण-तणाव प्राध्यापक श्री. रविंद्र भिकाजी कुनाळे.	75
22	1975 च्या आणिबाणीचा तत्कालीन राजकारणावरील परीणाम व बदल प्रा. डॉ. शिवाजी एकनाथ नाळे	79
23	Captain Welsh's Report On Political History Of Assam Madhurjya Mahanta	85
24	दो पीढियों का संघर्ष - समय सरगम प्रा. झाकीरहुसेन मुलाणी	88
25	अठराव्या शतकातील पुणे प्रांताचे कमाविसदार प्रा. सुरेंद्र अर्जुन शिरसट	90

REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)

सबाल्टर्न इतिहासलेखन प्रवाह

प्रा. लतिका हिरालाल पंडुरे
इतिहास विभाग,कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय, सात्रळ
ता. राहुरी, जि. अहमदनगर.
Email : latikadmehere@gmail.com

प्रस्तावना :

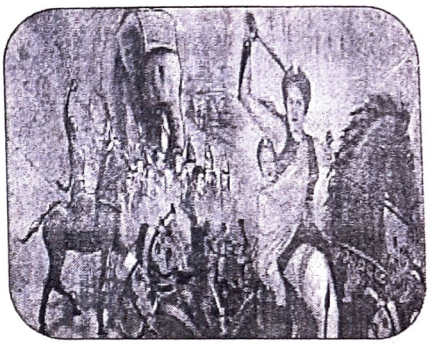

ब्रिटेन चे इतिहासकार इ.जे. हाब्सबाम आणि ई पी. टॉमसन तसेच फ्रान्सचे जॉर्ज रुडे आणि जार्जेस लेफेब्रे इत्यादी इतिहासकारानी उच्चवर्णीयांद्वारे उच्चवर्णियांचा इतिहास लेखनाच्या परंपरेविरूध्द सामान्य माणसाचा आपला इतिहास लिहिण्यावर भर दिला. त्याला 'हिस्ट्री फ्रॉम बिलो' अशी व्याख्या दिली गेली. हिस्ट्री फ्रॉम बिलो मानणाऱ्या बहुतेकांनी शोषित समुदायाची मानसिकता विशेषता लादलेले प्रभुत्व तसेच विरोधाची भावनांचे बदलते स्वरूप यावरच्या अभ्यासावर अधिक भर दिला.

सबाल्टर्न विचारप्रवाहाचा उदय प्रत्यक्षात दक्षिण आशियाई राष्ट्रांच्या इतिहासाच्या व्यापक संदर्भात झाला. या प्रदेशावर दुसऱ्या महायुध्दापूर्वी बरीच वर्षे वसाहतवादी पाश्चात्य राष्ट्रांचे वर्चस्व होते. त्या दिर्घ काळात स्थानिक लोकांनी अनेकदा परकीय शासनाविरूध्द उठाव केले अशा उठावात जनसामान्यांचा मोठ्याा प्रमाणात सहभाग होता. परंतु इतिहास ग्रंथात त्याचे योग्य चित्रण करण्यात आले नाही. अशा उठावातील समाजाच्या तळागाळातील जनसमुहांच्या कार्याची माहिती करून घेतल्याशिवाय तत्कालिन इतिहासाचे योग्य दर्शन होणार नाही हे लक्षात घेऊन डॉ. रणजित गुहा यांनी इतिहासाच्या या दृष्टिकोनाविषयी काही भारतीय इतिहास तज्ज्ञांशी चर्चा केली आणि त्यांनी सामूहिकरित्या जाणीवपूर्वक इतिहास क्षेत्रात नव्या प्रयोगाचे पर्व सुरू केले. Center of South Asian Cultural Studiesया संस्थेची स्थापना केली. 1982 साली 'सबाल्टर्न स्टडीज' या शीर्षकाचा डॉ. गुहांनी संपादित केलेला एक लेखसंग्रह प्रकाशित झाला. सबाल्टर्न स्टडीजचा पहिला अंक हा नव्या विचारप्रणालीचा द्योतक होय[1]

आधुनिक भारतात सिबाल्टर्न स्टडी ही दलित साहित्याच्या माध्यमातून समोर आली. सबाल्टर्न विचारांशी सहमत असलेल्या लेखकांचे म्हणने आहे की परंपरने चालत आलेल्या इतिहासकारांनी दलित जनतेचा खरा इतिहास आजपर्यंत लिहिला नाही. जेव्हा मोठ्याा क्रांत्या/घटना घडतात तेव्हा त्यांचा कर्ता असलेला सामान्य माणसाचा खरा इतिहास लिहिण्याकडे डोळेझाक केली जाते.

इतिहासकारांनी इतिहास लिहितांना राजा किंवा नेता यांनाच केंद्रस्थानी ठेऊन इतिहास लिहिला. सामान्य माणुस त्यांच्या खिजगणतीतही नव्हता. सबाल्टर्न इतिहासकारांनी असा इतिहास अपूर्ण मानला, भ्रामक मानला.

अन्तोनिओ ग्रामची हा इटालीयन विचारवंत त्याने इटालीत कामगाराच्या लढ्याचे आयोजन व नेतृत्वही केले. त्याने हुकूमशाही शासनावर टिका करणारे लेख लिहिले त्यामुळे त्याला तुरूंगवासाची शिक्षा झाली. तुरूंगात असताना त्याने तुरुंगातील राजबंद्यांशी परिस्थितीवर चर्चा केली व त्यांच्या नोंदी करून ठेवल्या. त्यांच्या मृत्यूनंतर त्याचे लिखाण प्रसिध्द झाले. आर्थिक व्यवहार सामाजिक जीवनाला आधारभूत असले तरी त्यावरील सांस्कृतिक जीवनाला तितकाच महत्वाचा असतो. सामाजिक परिवर्तनाला संस्कृती गती व दिशा देते असा सिध्दांत ग्रामचीने

मांडला. त्यातून त्याने हेजिमनी सिध्दांत मांडला. या सिध्दांतात सत्ताधीश वर्ग आपले वर्चस्व कायम ठेवण्यासाठी दमन व संमतीचा मार्ग अवलंबवीतात.

संशोधन पध्दती :–

सदर संशोधनात विश्लेषण पध्दतीचा वापर केलेला आहे. दुय्यम संदर्भ साधनाचा वापर केलेला आहे. अभ्यासक्रमातील विषय पुस्तकांचा वापर केलेला आहे.

गृहितके :–

1) इतिहास हा समाजातील 'सामान्य' माणसाशिवाय अपूर्ण आहे
2) 'बळी तो कान पिळी' या म्हणीनुसार सत्ताधीश बलवान वर्ग निम्नवर्गीयांवर अन्याय करतात ज्याची दखल कोणीच घेत नाही.
3) भारतात 'सबाल्टर्न स्टडी' चे नायक समाजातील सामान्य शोषित वर्ग आहे.
4) लहान समाजगटाचा इतिहास सबाल्टर्न इतिहास लेखनात आहे.

सबाल्टर्न इतिहास लेखनाचे महत्त्व :–

सबाल्टर्न इतिहासलेखन हा इतिहासातील नविन व धाडसी प्रयोग आहे.[2] वैशिष्टयपूर्ण वैचारिक धारणेतून जन्माला आलेल्या या इतिहास लेखन प्रवाहाचे स्वरूप मौलिक आहे.

दुर्लक्षित राहिलेल्या विषयांकडे अभ्यासकांचे लक्ष त्याने आकर्षित केले आहे. लहान समाज गट व लहान प्रदेशातील घडोमोंडीचा इतिहास त्याने शब्दबध्द केला आहे. समाजातील दडपलेले शक्तिप्रवाह व सत्ताकेंद्राचा त्यांच्या सामाजिक जीवनावरील प्रभावांचा विचार त्यात आहे तसेच इतिहासलेखनाला नविन प्रवेश या शाखेने मिळवून दिला.

दलित लेखक, कवी समाजसुधारक वर्ग यांनी शोषितांच्या अन्यायाला वाचा फोडण्यासाठी या इतिहास शाखेचा वापर केला. दया पवार यांचा कोंडवाडा, लक्ष्मण गायकवाड यांचा उचल्या, कर्ते समाजसुधारक महात्मा जोतिषा फुले यांच्या गुलामगिरी, शेतकऱ्यांचा आसुड तसेच भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी शोषिताच्या अन्यायाला वाचा फोडण्यासाठी या साहित्य प्रकाराचाही वापर केला. यांच्या साहित्यातून जनसामान्य वर्षानुवर्ष अन्याय सहन करणारे दुर्लक्षित समाजगटाचे दुःख जगासमोर आले.

सबाल्टर्न इतिहास लेखनाचे अभ्यासविषय :–

सबाल्टर्नची विषयमर्यादा व्यापक असून त्यात समाजातील कोणत्याही वंचित, पददलित, शोषित व दुर्लक्षित समुहाचा अंतर्भाव होतो. कामगार, आदिवासी व शेतकरी असे गट भारताच्या स्वातंत्र्य चळवळीत सहभागी होते. तरी त्यांचे विचार, मानसिकता व सहभागामागील प्रेरणा नेत्यांहून वेगळ्या व भिन्न स्वरूपाच्या होत्या.

आदिवासीचे जुलमी वसाहती शासनाविरूध्द केलेले उठाव केवळ आर्थिक कारणांतून झालेले नव्हते तर परकीय शासकांची धोरणे म्हणजे त्यांना त्यांच्या परंपरागत जीवनपध्दती व आत्मसन्मानावर झालेला आघात वाढल्यामुळे उठाव जाले. आदिवासीचे उठाव हाही सबाल्टर्न इतिहास लेखनाच्या भाग आहे.

प्रभुत्व, राजकीय व धार्मिक झुंडशाही राष्ट्रवाद जमातवाद इत्यादी संकल्पनाचा या लेखन प्रकारात अंतर्भाव आहे. स्वातंत्र्योत्तर काळातील भिन्न समाजगटांतील सामाजिक, धार्मिक व सांस्कृतिक संकेतांचा त्यांच्यामधील सत्ताकेंद्राचा व भिन्न सत्ताकेंद्रातील परस्परसंबंधाचा उहापोह सबाल्टर्न इतिहास लेखकांनी केलेला आहे.

वंचित गटांच्या जाणिव, ज्यांची मानसिकता त्यांच्यात होणारे परिवर्तन, त्याची कारणे, नेतृत्व, त्यांच्यावर पडणारा इतर गटांचा प्रभाव अशा 'अनेकविध' प्रश्नांचा अभ्यास सबाल्टर्न इतिहास लेखन प्रवाहात केला जातो व त्यांची उत्तरे शोधण्याचा प्रयत्न केला जातो.

सबाल्टर्न इतिहास लेखनात सकारात्मक व नकारात्मक भुमिका आढळून येतात.

सकारात्मक भुमिका :–

- कोणत्याही उठावात किंवा चळवळीत सामान्यांचा सहभाग असतो परंतु केवळ प्रभुत्व गाजविण्याच्या गटालाच इतिहास लेखनात प्रमुख स्थान मिळालेले आहे. खरे कर्ते हे जनसामान्य असतात त्यांना केंद्रस्थानी ठेवून इतिहास लेखन व्हायला हवे.
- वंचितांच्या फक्त कृतीचा इतिहास नाही तर त्या कृतीमागील त्यांचे विचार, अंतःप्रेरणा, अनुभव, जीवनपध्दती व जीवनमुल्ये यांचा अभ्यास होणे गरजेचे आहे. त्यांनी केलेली कृती कोणत्या प्रेरणेमुळे केली त्यामागील वैचारिक भुमिका काय होती यांचा विचार होणे अत्यंत गरजेचे आहे कारण त्याशिवाय त्यांच्या कार्याचे मर्म समजणार नाही.
- भारतीय समाज हा आर्थिक, सामाजिक दृष्ट्या तसेच जात, धर्म, लिंग, प्रदेश अशा विविध स्तरात विभागलेला आहे. एकजिनसीपणाचा अभाव, श्रेष्ठ–कनिष्ठ भेदभाव, कनिष्ठ स्तरांतील वर्गांची विचारसरणी, त्यांची मानसिकता वरिष्ठ वर्गापेक्षा वेगळी असते. त्यांची विशिष्ट संस्कृती असते पण ते अन्याय सहन करीत असतात हे सर्व इतिहास लेखनात स्पष्ट व्हायला हवे.
- प्राचीन काळापासून वंचिताचा उपयोग करून घेतल्यानंतर त्यांच्याकडे सोयीस्करपणे दुर्लक्ष केले जाते. प्रसंगी त्याच्या अस्तित्वावर, आस्मितेवर घाला घातला जातो. संथपणे जीवन जगणाऱ्या वंचितांच्या वर्गाला आपल्या परंपरा, श्रध्दा जीवन पध्दतीवर अतिक्रमण झाल्याचे लक्षात आल्यावर जे विद्रोही बनतात व संघटितपणे सत्ता गाजविणाऱ्यांवर हल्ले करतात, त्यांना प्रतिकार करतात हा विद्रोह उत्फुर्त असतो. त्यांच्या या उत्फुर्ततेला, अंतप्रेरणेला इतिहास लेखनात स्थान हवे.

नकारात्मक भुमिका :–

- नेतृत्व करणारा गट अभिजन वर्गातला व इतिहास लेखन करणारेही अभिजन गटातले त्यामुळे ते केवळ त्या वर्गाचीच वैचारिक भुमिका मांडतात. त्यांचे इतिहासलेखन हे अभिजन वर्गाचे नेतृत्व व यशाचे श्रेय त्यांनाच दिले जाते.
- जनसमान्याची दखल घेतली जात नाही यशाचे श्रेय वरिष्ठ वर्गाला मिळते.
- काही ठिकाणी कामगार, शेतकरी, महिला इत्यादीचा सहभाग दाखवला जातो पण हे अगदी कमी प्रमाणशत त्याचा उल्लेख केला जातो. हा वर्ग म्हणजे नेत्यांच्या सुचना मानणारा, मेंढराच्या कळपाप्रमाणेच त्यांची भुमिका दर्शविली जाते. त्यांचे चळवळीतील स्थान, स्वतंत्र विचारशक्ती यांचा उल्लेख सापडत नाही. त्या इतिहासलेखात वास्तवतेचा स्पर्श नसतो.
- आजवरचे इतिहास लेखन पक्षपाती स्वरुपाचे आहे. केवळ समाजातील एकाच गटाला समोर ठेवून केलेले हे लेखन खरे नाही. समाजातील खालचा स्तर वंचित त्यांना इतिहासात योग्य ते स्थान दिले गेलेले नाही त्यामुळे ही उणीव भरून काढणे हे सबाल्टर्न इतिहास लेखनाचे उपदिष्ट आहे.
- सबाल्टर्न इतिहास लेखन करताना त्याची स्त्रोतसाधने उपलब्ध नाहीत कारण वंचिताचा गट समाजातील तळागाळातील घटक आहे. त्यांच्याकडे स्वतः विचार, मत व्यक्त करण्याचे सामर्थ्य नव्हते. त्यामुळे त्यांचे विचार मानसिकता व्यक्त करणारे साहित्य तयार झालेले नाही. त्यांची कागदपत्रे, पत्रव्यवहार उपलब्ध होत नाहीत. त्यामुळे या इतिहास प्रकारात लेखन करणाऱ्या इतिहासकारांना मुख्यतः शासकीय अहवाल, कागदपत्रे, महसूल खात्याचे अहवाल, जनगणना अहवाल, पोलीस खाते, न्यायालय अशी साधने त्याचबरोबर वंचिताच्या संस्कृती लोकगीते, मुलाखती, मौखिक कथा इत्यादीची मदत घ्यावी लागते.

सबाल्टर्न इतिहास लेखनावरील आक्षेप :–

- केवळ जाणीवावर भर दिल्याने मूलभुत, आर्थिक शोषणाच्या विचाराकडे दुर्लक्ष झालेले आहे.
- वंचिताचा गट असे कोणत्याही गटाला आपण ठामपणे म्हणू शकत नाही. कारण एकच गट हा एकाचवेळी शोषित व शोषकही असू शकतो. आपल्या वरच्या गटासाठी तो शोषक तर आपल्यापेक्षा खालच्या दर्जाच्या गटासाठी ते शोषक भुमिकेत असु शकतात.

- हा इतिहास प्रकार अभ्यासत असतांना इतर विषयांचा व गटांचा अभ्यास करणे टाळता येत नाही.
- वंचित गटांचे उठाव उत्फुर्तपणे व स्वयंप्रेरणेने झाले हे जरी मान्य केले तरी व्यापक चळवळीसाठी विधायक विचारांची आवश्यकता असते. असे विचार अशिक्षित वंचित गटाला सुशिक्षित बुध्दिवंताचा गट देऊन शकतो त्यामुळे सुशिक्षित बुध्दिवंताच्या वैचारिक कार्याला व नेतृत्वाला इतिहास लेखनातून पूर्णतः बाजूला सारणे हे व्यवहारवादी व वास्तववादी ठरत नाही.

समारोप :–

विसाव्या शतकातील हा अभिनव प्रयोग, काही प्रमाणात टिका होत असली तरी या लेखन प्रवाहाचे महत्व वादातीत आहे. हा धाडसी व वेगळा प्रयोग ठरतो. दुर्लक्षित, वंचित गटांना सबाल्टर्न विचारधारेने इतिहास लेखनात स्थान मिळवून दिले आहे. परंपरागत स्त्रोतसाधने तुटपुंजी असूनही गैर पारंपारिक साधनांद्वारे माहिती मिळवून, तिचे चिकित्सक विश्लेषण करून त्याने इतिहास लेखन केलेले आहे. त्यामुळे सबाल्टर्न इतिहास लेखन हा इतिहास लेखन तंत्रातील एक महत्त्वपूर्ण लेखनप्रवाह आहे.

निष्कर्ष :–

- सबाल्टर्न इतिहास प्रवाह ही इतिहास शाखा सर्वसामान्य शोषितांच्या दु:खाला वाचा फोडणारी शाखा आहे.
- भारतात 'रणजित गृहा' तर इटालीतील ॲन्तानिओ ग्रामची हे या शाखेचे जनक आहेत.
- सबाल्टर्न इतिहास लेखनाने परंपरागत इतिहास लेखनाला छेद दिला आणि भारतीय इतिहास लेखनाला नवी दिशा दिली.
- स्त्री, शुद्र, दलित, कामगार यांसारखे दुर्लक्षित समाजगटांना सबाल्टर्न इतिहास लेखनाने इतिहासात स्थान मिळवून दिले.

संदर्भ :–

1) आधुनिक भारत आणि इतिहास संशोधन पध्दती
पेपर क्र. 3 खंड–2
लेखक : डॉ. एन. एस. तांबोळी
प्रकाशन : निराली प्रकाशन
प्रथम आवृत्ती : ऑगस्ट 2012
पृष्ठ क्र. 4.39, 4.40

2) इतिहास एस–3 इतिहासाची ओळख
प्रा. सौ. स्मिता शिंगारम
प्रा. सौ. अर्चना कुंभार
आयडॉल प्रकाशन 2015